MPPEB

मध्य प्रदेश शासन,
स्कूल शिक्षा विभाग द्वारा आयोजित

AGRAWAL EXAMCART
Paper Pakka Fasega!

मध्य प्रदेश प्राथमिक शिक्षक पात्रता परीक्षा (ऑनलाइन) 2022

बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र

सम्पूर्ण स्टडी गाइड
(वर्ग-3)

- पाठ्यक्रमानुसार सम्पूर्ण थ्योरी
  M.P. School Edu. Board की पाठ्य-पुस्तकों पर आधारित
- 550+ महत्वपूर्ण प्रश्नों का व्याख्यात्मक हल सहित अध्यायवार समावेश
- 02 प्रैक्टिस सेट्स

ज्योत्सना चौहान | पी.डी. पाठक
(साभार)

VERY IMPORTANT 30 नवंबर 2021 को M. P. Primary TET के Notification में जारी पाठ्यक्रम पर आधारित एक मात्र पुस्तक

Code	Price	Pages
CB458	₹ 199	254

MPPEB

मध्य प्रदेश शासन,
स्कूल शिक्षा विभाग द्वारा आयोजित

AGRAWAL EXAMCART
Paper Pakka Fasega!

मध्य प्रदेश प्राथमिक शिक्षक पात्रता परीक्षा (ऑनलाइन) 2022

बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र

सम्पूर्ण स्टडी गाइड
(वर्ग-3)

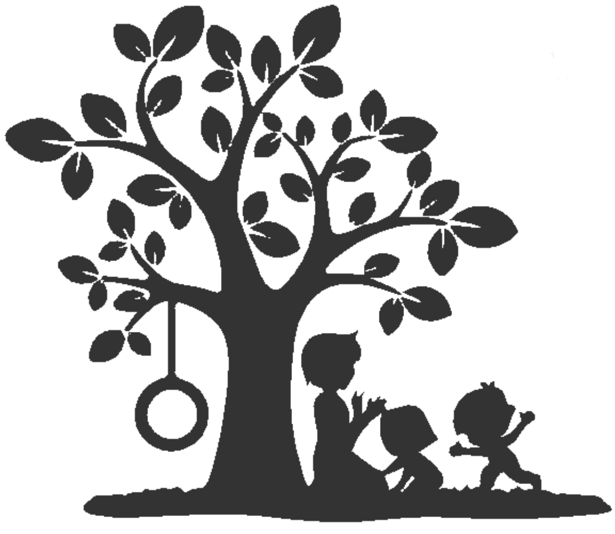

Prepared by:
ज्योत्सना चौहान | पी.डी. पाठक (साभार)

Book Name | MPTET बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र स्टडी गाइड (वर्ग–3) 2022

Editor Name | Rahul Agarwal

Edition | Latest

Published by | Agrawal Group Of Publications (AGP)
© All Rights reserved.
ADDRESS (Head office) | 28/115 Jyoti Block, Sanjay Place, Agra, U.P. 282002

CONTACT | quickreply@agpgroup.in
We reply super fast
BUY BOOK | www.examcart.in
Cash on delivery available
WHATSAPP (Head office) | 8937099777
PRINTED BY | Schoolcart

DESKTOP PUBLISHING | Agrawal Group Of Publications (AGP)

ISBN | 978-93-89608-45-8
© COPYRIGHT | Agrawal Group Of Publications (AGP)

Disclaimer: This teaching material has been published pursuant to an undertaking given by the publisher that the content does not in any way whatsoever violate any existing copyright or intellectual property right. Extreme care is put into validating the veracity of the content in this book. However, if there is any error found, please do report to us on the below email and we will re-check; and if needed rectify the error immediately for the next print.

ATTENTION

No part of this publication may be re-produced, sold or distributed in any form or medium (electronic, printed, pdf, photocopying, web or otherwise) on Amazon, Flipkart, Snapdeal without the explicit contractual agreement with the publisher. Anyone caught doing so will be punishable by Indian law.

इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा प्रकाशक के साथ स्पष्ट संविदात्मक समझौते के बिना अमेज़न, फ्लिपकार्ट, स्नैपडील पर किसी भी रूप या माध्यम (इलेक्ट्रॉनिक, मुद्रित, पीडीएफ, फोटोकॉपी, वेब या अन्यथा) में फिर से उत्पादित, बेचा या वितरित नहीं किया जा सकता है। जो कोई भी ऐसा करता हुआ पकड़ा जाएगा, वह भारतीय कानून द्वारा दंडनीय होगा।

AGP contributes Rupee One on every book purchased by you to the **Friends of Tribals Society** Organization for better education of tribal children.

यह पेज अवश्य पढ़ें।

(जानिए हम आपकी परीक्षा की तैयारी में कैसे मदद करते हैं)

कुछ ही वर्षों में **Agrawal Examcart** की पुस्तकें शिक्षकों और छात्रों के बीच काफी लोकप्रिय हो गयी हैं। हमारे **Subject Experts** पुस्तकों की विषय सामग्री पर विशेष ध्यान देते हैं। परीक्षा के पाठ्यक्रमानुसार पाठ्यपुस्तकों और गाइडबुक्स के माध्यम से हम आपको **Syllabus-wise** सटीक और सरल भाषा में पुस्तकें प्रदान करते रहे हैं जिससे आपको कम समय में परीक्षा की तैयारी में मदद मिले। किसी भी परीक्षा सम्बन्धी **Practice set** को तैयार करते समय, हमारा उद्देश्य यही रहता है कि आप अपनी परीक्षा की तैयारी का स्वयं मूल्यांकन **90%** से अधिक सटीकता से कर सकें। यही कारण है कि प्रत्येक **Practice set** पिछले परीक्षा पैटर्न के अनुसार तैयार किया जाता है और इसमें बहुत अच्छे प्रश्नों का संग्रह होता है।

"हम आपके पुस्तक खरीदने से लेकर पुस्तक पूरा पढ़ने तक के सफर में हम आपके सारथि होंगे। इसीलिए हमने कुछ ऐसी सेवाएँ (नीचे दी गई) शुरू की हैं जिनकी मदद से हम आपकी सहायता कर पाएंगे।"

अपने Phone पर इस पुस्तक के संशोधित Updates प्राप्त करें!

हर बार जब हम इस पुस्तक में संशोधन या कोई भी नया **Update** करेंगे तो उसकी जानकारी हम आपके **Whatsapp Number** पर भेजेंगे जिससे आपको इस बुक का नया संस्करण न लेना पड़े और आपको **free** में **Updated Content** मिल जाये। इसके लिए आपको नीचे दिए हुए फॉर्म को भरना होगा जिससे हम आपको **Updated content** भेज पाएं। ध्यान दें कि फॉर्म भरते समय **Book Code** सही डालें नहीं तो आपको किसी और बुक के **Updates** मिलेंगे। बुक का कोड पुस्तक के पीछे कवर पर नीचे से बायीं तरफ दिया है जो **'CB'** से शुरू होता है।

Form link ☞ http://bit.ly/exmcrtrev or Scan Code ☞

Whatsapp Helpline No. (पुस्तक में गलती या परीक्षा सम्बन्धित जानकारी)

परीक्षाओं से सम्बन्धित किसी भी तरह की जानकारी जैसे—पाठ्यक्रम, पेपर पैटर्न, सबसे अच्छी पुस्तकें, परीक्षा सम्बन्धित महत्वपूर्ण **Dates**, किसी प्रश्न का हल एवं हमारी पुस्तकों में किसी भी तरह की गलती पाए जाने पर हमारे **Whatsapp Helpline** नंबर पर संपर्क करें। हमारी **Experts** की **Team** आपको उससे सम्बन्धित सही जानकारी उपलब्ध कराएगी।

Whatsapp number ☞ 8937099777 or Scan Code ☞

Agrawal Examcart Catalog ☞ https://bit.ly/exmcat21 Website ☞ https://bit.ly/amzexmcrt

"सफलता बैच"

यहाँ selection एक जिद है।

'Examcart Live' आपके लिए लेकर आया है **'सफलता बैच'** जिसमें हमारे experts आपको **3 Points Strategy (Learn, Test and Re-Learn)** के माध्यम से **Daily Current Affairs, Maths** और **Reasoning** की live classes सभी परीक्षाओं के लिए अपने YouTube Channel पर लेंगे और साथ ही आपको Daily एवं Weekly quizzes **(Examcart App पर)** दी जाएँगी। इस Strategy के अनुसार पढ़ने पर आप किसी भी परीक्षा में इन विषयों के प्रश्नों को अति सरलता से हल कर पाएंगे।

Subscribe to our YouTube Channel 👉 **"Examcart Live"**

Join our Telegram Channel 👉 **"Examcart Live"**

Youtube Channel पर आगामी Online Classes का सम्पूर्ण schedule आपको रोज़ाना हमारे Telegram Channel पर दिया जाएगा।

आइए अब हमारे Social Media Platforms के साथ जुड़िए और अपनी तैयारी को और बेहतर बनाइए।

Scan | Scan | Scan

Subscribe to our YouTube Channel "Examcart Live"	Join our Telegram Channel "Examcart Live"	Follow our Instagram Page "examcart_agp"
Daily Live Classes on Math and Reasoning for All Exams	Youtube Channel पर आगामी Online Classes का सम्पूर्ण schedule आपको रोज़ाना हमारे Telegram Channel पर।	Test Your IQ (Tricky Questions on Math and Reasoning)
Daily Current Affairs Classes	आगामी परीक्षाओं से सम्बंधित Best Books के Updates	Daily Reels on Math and Reasoning Questions
आगामी परीक्षाओं के Notifications एवं सम्बंधित नयी जानकारी के Updates	आगामी परीक्षाओं के सरलीकृत Notifications	Test Your Vocab (English Grammar पर महत्वपूर्ण प्रश्न)
परीक्षाओं के papers का Disscussion	Daily Free Online Quizzes की जानकारी	आगामी परीक्षाओं के सरलीकृत Notifications
आगामी परीक्षाओं के विगत वर्षों के पेपर्स एवं प्रैक्टिस पेपर्स पर Classes		Daily Current Affairs Reel

BEST DISCOUNTS पर Books को खरीदें हमारी Website से!

☞ **www.examcart.in**

Agrawal Examcart की सभी पुस्तकें हमारी **Website** पर काफी आकर्षक **Discount** पर उपलब्ध हैं। हम एक **Promotional offer** चला रहे हैं जिसके माध्यम से आप हमारी **Website** से प्रत्येक खरीदारी पर **5%** अतिरिक्त छूट का और लाभ ले सकते हैं।

COUPON CODE ☞ EXAM2021

(**5% extra discount** पाने के लिए ऊपर दिए गए **coupon code** को **checkout** से पहले प्रयोग करें।)

Best Books

(केंद्र एवं सभी राज्यों की प्रतियोगी एवं प्रवेश परीक्षाओं के लिए उपयोगी)

'भारत की अधिकतम सरकारी परीक्षाओं में **सामान्य ज्ञान, गणित, हिंदी, तर्कशक्ति** और **English** जैसे विषयों से ही प्रश्न पूछे जाते है। प्रत्येक छात्र यही चाहता है कि इन सभी विषयों की एक ऐसी पुस्तक मिले जिसे पूरा पढ़ने पर वह किसी भी परीक्षा को आसानी से **Crack** कर सके। **Agrawal Examcart** की टीम ने काफी रीसर्च एवं सर्वेक्षण करने के बाद ऐसी ही प्रणाली पर पुस्तकें तैयार की है।'

नीचे ऐसी ही पुस्तकों का विवरण है और हर पुस्तक पर **QR code** दिया गया है जिसके माध्यम से आप पुस्तक का कुछ अंश पढ़कर इस बात की पुष्टि भी कर सकते है।

Scan

Scan

Scan

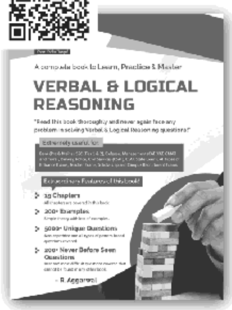

In press

Scan

Scan

Scan

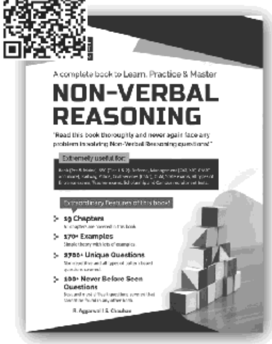

Scan

Scan

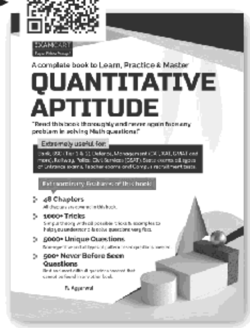

पुस्तक की विषय-सूची	पुस्तक विषय–सूची के अनुसार MPTET बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र पाठ्यक्रम का विभाजन

अध्याय	पृष्ठ संख्या	
(अ) बाल विकास		
1. बाल विकास की अवधारणा एवं अधिगम से इसका सम्बन्ध	1-25	• बाल विकास की अवधारणा एवं इसका अधिगम से संबंध।
2. विकास व विकास को प्रभावित करने वाले कारक	26-28	• विकास और विकास को प्रभावित करने वाले कारक।
3. बाल विकास के सिद्धान्त	29-32	• बाल विकास के सिद्धांत।
4. बालकों का मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यवहार सम्बन्धी समस्याएँ	33-38	• बालकों का मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यवहार संबंधी समस्याएँ।
5. वंशानुक्रम एवं वातावरण का प्रभाव	39-45	• वंशानुक्रम एवं वातावरण का प्रभाव।
6. समाजीकरण प्रक्रियाएँ : सामाजिक जगत एवं बच्चे (शिक्षक, अभिभावक, साथी)	46-50	• समाजीकरण प्रक्रियाएँ : सामाजिक जगत एवं बच्चे (शिक्षक, अभिभावक, साथी)
7. पियाजे, पावलव, कोहलर व थॉर्नडाइक : रचना एवं आलोचनात्मक स्वरूप	51-60	• पियाजे, पावलव, कोहलर और थॉर्नडाइक : रचना एवं आलोचनात्मक स्वरूप।
8. बाल-केन्द्रित एवं प्रगतिशील शिक्षा की अवधारणा	61-66	• बाल केन्द्रित एवं प्रगतिशील शिक्षा की अवधारणा।
9. बुद्धि के निर्माण का आलोचनात्मक स्वरूप एवं उसका मापन, बहुआयामी बुद्धि	67-81	• बुद्धि की रचना का आलोचनात्मक स्वरूप और उसका मापन, बहुआयामी बुद्धि।
10. व्यक्तित्व और उसका मापन	82-87	• व्यक्तित्व और उसका मापन।
11. भाषा और विचार	88-95	• भाषा और विचार।
12. सामाजिक निर्माण के रूप में जेन्डर, जेन्डर की भूमिका, लिंग भेद और शैक्षिक प्रथाएँ	96-103	• सामाजिक निर्माण के रूप में जेंडर, जेंडर की भूमिका, लिंगभेद और शैक्षिक प्रथाएँ।
13. अधिगमकर्ताओं में व्यक्तिगत भिन्नताएँ (भाषा, जाति, लिंग, सम्प्रदाय, धर्म आदि की विषमताओं पर आधारित व्यक्तिगत भिन्नताओं की समझ)	104-109	• अधिगम कर्ताओं में व्यक्तिगत भिन्नताएं, भाषा, जाति, लिंग, संप्रदाय, धर्म आदि की विषमताओं पर आधारित भिन्नताओं की समझ।
14. अधिगम के लिए आकलन व अधिगम का आकलन में अन्तर, शाला आधारित आकलन, सतत् एवं समग्र मूल्यांकन : स्वरूप एवं प्रथाएँ (मान्यताएँ)	110-131	• अधिगम के लिए आंकलन और अधिगम का आंकलन में अंतर, शाला आधारित आंकलन, सतत् एवं समग्र मूल्यांकन : स्वरूप और प्रथाएँ (मान्यताएँ)।
15. अधिगमकर्त्ताओं की तैयारी के स्तर के आंकलन हेतु उपयुक्त प्रश्नों का निर्माण व आलोचनात्मक चिन्तन व उपलब्धि का आंकलन	132-138	• अधिगमकर्ताओं की तैयारी के स्तर के आंकलन हेतु उपयुक्त प्रश्नों का निर्माण, कक्षाकक्ष में अधिगम को बढ़ाने आलोचनात्मक चिंतन तथा अधिगमकर्ता की उपलब्धि के आंकलन के लिए।

पुस्तक की विषय–सूची

पुस्तक विषय–सूची के अनुसार MPTET बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र पाठ्यक्रम का विभाजन

अध्याय	पृष्ठ संख्या	
(ब) समावेशित शिक्षा की अवधारणा एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की समझ		
16. अलाभान्वित एवं वंचित वर्गों सहित विविध पृष्ठभूमियों के अधिगमकर्ता की पहचान	**139-152**	• अलाभान्वित एवं वंचित वर्गों सहित विविध पृष्ठभूमियों के अधिगमकर्ताओं की पहचान।
17. अधिगम कठिनाइयों, 'क्षति' आदि से ग्रस्त बच्चों की आवश्यकताओं की पहचान	**153-165**	• अधिगम कठिनाइयों, 'क्षति' आदि से ग्रस्त बच्चों की आवश्यकताओं की पहचान।
18. प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, विशेष क्षमता वाले अधिगमकर्ताओं की पहचान	**166-185**	• प्रतिभावान, सृजनात्मक, विशेष क्षमता वाले अधिगमकर्ताओं की पहचान। • समस्याग्रस्त बालक : पहचान एवं निदानात्मक पक्ष। • बाल अपराध : कारण एवं प्रकार।
(स) अधिगम और शिक्षाशास्त्र (पेडागॉजी)		
19. बालकों का सोचना व सीखना	**186-197**	• बच्चे कैसे सोचते और सीखते हैं, बच्चे शाला प्रदर्शन में सफलता प्राप्त करने में क्यों और कैसे असफल होते हैं।
20. समस्या समाधानकर्ता और वैज्ञानिक अन्वेषक के रूप में बालक एवं वैकल्पिक धारणाएँ	**198-204**	• शिक्षण और अधिगम की मूलभूत प्रक्रियाएँ, बच्चों के अधिगम की रणनीतियाँ, अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में, अधिगम का सामाजिक संदर्भ। • समस्या समाधानकर्ता और वैज्ञानिक अन्वेषक के रूप में बच्चा। • बच्चों में अधिगम की वैकल्पिक धारणाएँ, बच्चों की त्रुटियों को अधिगम प्रक्रिया में सार्थक कड़ी के रूप में समझना, अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक, अवधान और रुचि।
21. संज्ञान एवं संवेग	**205-209**	• संज्ञान और संवेग।
22. अभिप्रेरणा व अधिगम	**210-220**	• अभिप्रेरणा और अधिगम। • अधिगम में योगदान देने वाले कारक–व्यक्तिगत और पर्यावरणीय।
23. निर्देशन व परामर्श	**221-224**	• निर्देशन एवं परामर्श।
24. अभिक्षमता, स्मृति एवं विस्मृति	**225-229**	• अभिक्षमता और उसका मापन। • स्मृति और विस्मृति।

प्रैक्टिस सेट्स

- प्रैक्टिस सेट–1 1-11
- प्रैक्टिस सेट–2 12-24

अध्याय 1

बाल विकास की अवधारणा एवं अधिगम से इसका सम्बन्ध

बाल विकास की अवधारणा (Concept of Child Development)

'बाल विकास' से तात्पर्य बालकों के सर्वांगीण विकास से है। बाल विकास का अध्ययन करने के लिये 'विकासात्मक मनोविज्ञान' की एक अलग शाखा बनाई गयी जो बालकों के व्यवहारों का अध्ययन गर्भावस्था से लेकर मृत्युपर्यन्त तक करती है। परन्तु वर्तमान समय में इसे 'बाल विकास' (Child Development) में परिवर्तित कर दिया गया क्योंकि बाल मनोविज्ञान में केवल बालकों के व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है जबकि बाल विकास के अन्तर्गत उन सभी तथ्यों का अध्ययन किया जाता है जो बालकों के व्यवहारों को एक निश्चित दिशा प्रदान कर विकास में सहायता प्रदान करते हैं।

'हरलॉक' (Hurlock) ने इस सम्बन्ध में कहा है कि "बाल मनोविज्ञान का नाम बाल विकास इसलिये बदला गया क्योंकि अब बालक के विकास के समस्त पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है, किसी एक पक्ष पर नहीं।"

बाल विकास के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने अलग-अलग मत दिये हैं—

क्रो एण्ड क्रो के अनुसार—"बाल विकास वह विज्ञान है जो बालक के व्यवहार का अध्ययन गर्भावस्था से मृत्युपर्यन्त तक करता है।"

डार्विन के अनुसार—"बाल विकास व्यवहारों का वह विज्ञान है जो बालक के व्यवहार का अध्ययन गर्भावस्था से मृत्युपर्यन्त तक करता है।"

हरलॉक के अनुसार—"बाल विकास मनोविज्ञान की वह शाखा है जो गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त तक होने वाले मनुष्य के विकास की विभिन्न अवस्थाओं में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करता है।"

इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि बाल विकास बाल मनोविज्ञान की ही एक शाखा है जो (i) बालकों के विकास, (ii) व्यवहार, (iii) विकास को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों का अध्ययन करती है।

बाल विकास की आवश्यकता (Need of Child Development)

बाल विकास अध्यापकों के लिये निम्न प्रकार आवश्यक है—

1. **बालकों की मनोरचना की जानकारी प्राप्त करने हेतु**—सार्वभौम का कोई भी प्राणी पूर्णतः एक समान नहीं होता है। ठीक उसी प्रकार कोई भी दो बालक एक प्रकार नहीं होते सभी की मनोरचना, मस्तिष्क रचना भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। लेकिन अध्यापक को यह सुविधा नहीं प्राप्त है कि प्रत्येक बालक को अलग-अलग उसकी मनोरचना के अनुसार शिक्षा प्रदान करें। अधिकांश सामूहिक रूप में कक्षाओं में अध्यापन करना पड़ता है, यद्यपि कि सामूहिक कक्षाओं में भी बालक की वैयक्तिक भिन्नता को समाप्त नहीं किया जा सकता है। ऐसी दशा में शिक्षक मनोविज्ञान का अध्ययन करके अध्यापन की एक सर्व उपयोगी पद्धति की जानकारी प्राप्त करके शिक्षण करता है ताकि सभी छात्रों को उसका लाभ मिल सके। बच्चों के मस्तिष्क रचना की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता है।
2. **बाल विकास प्रक्रिया को समझाने में सहायक**—प्रत्येक बालक का विकास अपने अनुसार विभिन्न नियमों व सिद्धान्तों के अनुसार होता है। प्रत्येक बालक का विकास व्यक्तिगत रूप से होता है तथा विशिष्ट व्यवहार करता है तथा क्षमताओं को ग्रहण करता है। बाल विकास के अध्ययन से अपना शिक्षण विकास प्रक्रिया क्षमताओं का प्रयोग बालक के अधिगम व क्षमता समर्थन के अनुरूप करेगा।
3. **बाल निर्देशन व परामर्श में सहायक**—बाल मनोविज्ञान के अध्ययन से शिक्षक छात्र की क्षमताओं व रुचियों का ज्ञान प्राप्त करके तदनुसार आगे की पढ़ाई करने तथा व्यवसाय मार्ग व अध्ययन तथा अभिभावक को देता है। इससे छात्र के भटकने तथा समय व श्रम के अपव्यय होने की सम्भावना नहीं रहती है।
4. **बालकों के प्रति भविष्यवाणी करने में सहायक**—बाल मनोविज्ञान के जानकार शिक्षक बाल मनोविज्ञान का अध्ययन करके उसके भविष्य के प्रति अनुमान लगाकर कथन कर सकता है, जिससे छात्रों के व्यवसाय चयन में आसानी होती है।
5. **बाल व्यवहार का मार्गान्तरीकरण व नियन्त्रण में सहायक**—कभी-कभी छात्र ऐसा व्यवहार करता है जो बालक व समाज के प्रति अच्छा नहीं होता, वह व्यवहार इतना प्रगाढ़ हो जाता है जिसे पूर्णतयः समाप्त करना सम्भव नहीं होता, ऐसी दशा में बालक के व्यवहार व्यवहरण की दिशा बदल कर उसको रचनात्मक बनाया जा सकता है।

   बाल मनोविज्ञान के अध्ययन से शिक्षक के अन्दर ऐसा कौशल आ जाता है और वह बाल व्यवहार पर नियन्त्रण कर सकता है।

बाल विकास के क्षेत्र (Scopes of Child Development)

बाल विकास के विषय क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को सम्मिलित किया जाता है—

1. **बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन** (Study of Various Stages of Development)—प्राणी के जीवन प्रसार में अनेकों अवस्थायें होती हैं। जैसे—गर्भकालीन अवस्था, शैशवावस्था, बचपनावस्था, बाल्यावस्था, वयःसंधि और किशोरावस्था। बाल विकास केवल बाल्यावस्था का ही अध्ययन नहीं करता अपितु विकास क्रम की सभी अवस्थाओं के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, बौद्धिक आदि सभी पहलुओं का अध्ययन करता है।
2. **बाल विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन** (Study of Various Aspects of Child Development)—बाल विकास, विकास के किसी एक ही क्षेत्र से सम्बन्धित नहीं होता है। इसके अन्तर्गत विकास के विभिन्न पहलुओं, जैसे—शारीरिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास, सामाजिक विकास, क्रियात्मक विकास, भाषा विकास, नैतिक विकास, चारित्रिक विकास और व्यक्तित्व विकास सभी का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाता है।

3. बालकों की विभिन्न असामान्यताओं का अध्ययन (Study of Various Abnormalities of Children)—बाल विकास के अन्तर्गत केवल सामान्य बालकों के विकास का ही अध्ययन नहीं किया जाता बल्कि बालकों के जीवन विकास क्रम में होने वाली असामान्यताओं और विकृतियों का भी अध्ययन किया जाता है। बाल विकास, असन्तुलित व्यवहारों, मानसिक विकारों, बौद्धिक दुर्बलताओं तथा बाल अपराधों के कारणों को जानने का प्रयास करता है और निराकरण हेतु उपाय भी बताता है।

4. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अध्ययन (Study of Mental Health)—बाल विकास केवल मानसिक दुर्बलताओं और रोगों का ही अध्ययन नहीं करता बल्कि विभिन्न मनोवैज्ञानिक तरीकों से उनके उपचार भी प्रस्तुत करता है। मनोचिकित्सा बाल मनोविज्ञान और बाल विकास की ही देन है।

5. बालकों की विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन (Study of Various Mental Processes of Children)—बाल विकास बालकों के बौद्धिक विकास की विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं; जैसे—अधिगम, कल्पना, चिन्तन, तर्क, स्मृति तथा प्रत्यक्षीकरण आदि का अध्ययन करता है। बाल विकास यह जानने का प्रयास करता है कि विभिन्न आयु स्तरों में इन मानसिक प्रक्रियायें किस रूप में पायी जाती हैं और इनके विकास की गति क्या होती है? इसी के आधार पर मानसिक प्रक्रियाओं का विकास किया जाता है।

6. बालकों की रुचियों का अध्ययन (Study of Childhood Interests)—बाल विकास बालकों की रुचियों का अध्ययन कर उन्हें शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करता है। रुचियाँ एक अर्जित व्यवहार है जो जन्मजात नहीं होती हैं बल्कि सीखी जाती हैं। रुचियाँ कार्य की प्रगति में प्रेरणा का कार्य करती हैं और लक्ष्य की पूर्ति को आसान बनाती हैं। यदि बालक को किसी कार्य में रुचि होती है तो वह उसे शीघ्रता से अधिक मनोयोग के साथ पूरा कर लेता है।

7. बालकों की वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन (Study of Individual Differences of Children)—यद्यपि सभी आयु स्तरों पर विकास का एक निश्चित प्रतिरूप होता है लेकिन फिर भी प्रत्येक क्षेत्र में सभी बालकों का विकास समान नहीं होता है। शारीरिक विकास में कुछ बालक अधिक लम्बे, कुछ नाटे तथा कुछ सामान्य लम्बाई के होते हैं। इसी प्रकार मानसिक विकास में भी कुछ प्रतिभाशाली, कुछ सामान्य और कुछ मन्द बुद्धि होते हैं। इसी प्रकार कुछ बालक सामाजिक तथा बहिर्मुखी होते हैं जबकि कुछ अन्तर्मुखी। अतः विकास के सभी क्षेत्रों में व्यक्तिगत भिन्नता पायी जाती है। बाल विकास वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन कर उन कारणों को जानने का प्रयास करता है, जिससे सामान्य विकास प्रभावित हुआ है।

8. बालकों के व्यक्तित्व का मूल्यांकन (Assessment of Children Personality)—बाल विकास के अन्तर्गत बालकों की विभिन्न शारीरिक और मानसिक योग्यताओं का मापन व मूल्यांकन किया जाता है। योग्यताओं के मापन व मूल्यांकन के लिये बाल विकास के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिकों द्वारा नित नये वैज्ञानिक तथा प्रमापीकृत परीक्षणों का निर्माण किया जाता है। ये परीक्षण विभिन्न आयु-स्तरों पर बालकों की योग्यताओं का मापन कर उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करते हैं।

बाल विकास के अध्ययन का महत्व
(Importance of Study of Child Development)

वर्तमान समय में बाल विकास भी अन्य सामाजिक विज्ञानों की तरह एक स्वतन्त्र विज्ञान है। इसका अध्ययन सम्पूर्ण मानव विकास की इकाई माना जाता है इसलिये **क्रो** एण्ड **क्रो** ने कहा है कि "व्यक्ति तथा समाज के कल्याण के क्षेत्र में रुचि रखने वाले मनोवैज्ञानिक, शिक्षक, अभिभावक, सामाजिक कार्यकर्ता बालकों के अध्ययन को महत्व देने लगे हैं। 'बालक व्यक्ति का पिता है' बालक के प्रथम छः वर्ष महत्वपूर्ण होते हैं, आदि लोकोक्तियों ने बाल विकास के अध्ययन के महत्व को बढ़ाया ही है।"

इस प्रकार बाल विकास का अध्ययन सभी के लिये उपयोगी है। बालक किसी भी समाज व राष्ट्र की आधारशिला है। उनका स्वस्थ विकास समाज व राष्ट्र की प्रगति में योगदान देता है। माता-पिता भी बाल अध्ययन के द्वारा अपने बच्चे को समाज के अच्छे नागरिक के रूप में विकसित कर सकते हैं। उसकी प्रतिभाओ को जानकर उसकी शिक्षा की उचित व्यवस्था कर सकते हैं।

बाल विकास का अध्ययन माता-पिता तथा अन्य लोगों के लिए निम्न रूपों में लाभकारी हो सकता है—

1. विकासात्मक क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त होना—विकास की प्रक्रिया के दौरान प्रत्येक बालक किसी विशिष्ट आयु में कुछ विशिष्ट गुण प्रदर्शित करता है जो उससे पूर्व या बाद की अवस्थाओं में या तो होते ही नहीं है या यदि होते भी हैं तो सामान्य होते हैं विशिष्ट नहीं। इन्हीं 'विशिष्ट गुणों' को विकासात्मक क्रियायें कहा जाता है। इन विकासात्मक क्रियाओं के आधार पर बालक के विकास की भविष्यवाणी की जा सकती है और विकासात्मक क्रियाओं के अनुसार उन गुणों को विकसित करने के लिये साधन व सुविधायें प्रदान की जा सकती हैं; जैसे—जन्म के बाद 9-12 माह की आयु में बालक चलने की क्रियायें करने लगता है, 3-4 माह में भाषा विकास होने लगता है आदि सभी क्रियायें अवस्था विशेष की विकासात्मक क्रियायें हैं।

बाल विकास के अध्ययन से माता-पिता तथा अभिभावकों को विकासात्मक क्रियाओं के आधार पर बालकों के विकास को उचित निर्देशन देने में सहायता मिलती है। जैसे—यदि किसी बालक का भाषा विकास सही समय पर नहीं होता है तो माता-पिता उन कारणों को जानने का प्रयास करते हैं जिसे जानकर समस्या का निराकरण किया जा सके।

2. बाल पोषण विधियों का ज्ञान—बाल विकास के अध्ययन से माता-पिता तथा अभिभावकों को बाल पोषण विधियों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। प्रत्येक माता-पिता प्रथम शिशु के जन्म के समय बाल पोषण के ज्ञान से अनभिज्ञ होते हैं लेकिन बाल विकास का अध्ययन माता-पिता को मातृत्व तथा पितृत्व के दायित्व जैसे गम्भीर प्रश्नों का उत्तर हल करके बाल पोषण को सहज बनाता है।

3. व्यक्तिगत विभिन्नताओं की जानकारी प्राप्त होना—यद्यपि विकास का एक निश्चित प्रतिमान होता है और प्रत्येक विकासावस्था की अपनी कुछ प्रमुख विशेषतायें होती हैं फिर भी जन्म के बाद दो बालकों के विकास में समानता नहीं पायी जाती है। जैसे—एक बालक कुशाग्र बुद्धि होता है जबकि दूसरा सामान्य बुद्धि। बाल विकास के अध्ययन से व्यक्तिगत विभिन्नताओं का पता चलता है जिससे बालकों के शिक्षा निर्देशन में सहायता मिलती है।

4. **विकास की अवस्थाओं का ज्ञान**—बाल विकास का अध्ययन माता-पिता को यह जानकारी प्रदान करता है कि गर्भावस्था से लेकर बालक प्रौढ़ावस्था तक किस प्रकार विकसित होता है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में विकास के विभिन्न पहलुओं (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक) में कौन-कौन से परिवर्तन होंगे। विकास की अवस्थाओं की जानकारी प्राप्त कर माता-पिता बालकों के समुचित विकास में अपना योगदान दे सकते हैं।
5. **बालकों के प्रशिक्षण तथा शिक्षा में उपयोगी**—बाल विकास के अध्ययन से यह जानकारी मिलती है कि किस अवस्था में बालक कितनी मानसिक योग्यता रखता है। बच्चे की मानसिक योग्यता और बुद्धि के अनुसार ही उसके प्रशिक्षण तथा शिक्षा की व्यवस्था की जाती है तथा विभिन्न कक्षाओं में उसकी मानसिक योग्यतानुसार ही पाठ्यक्रम तैयार किया जाता है। स्कूलों में समय सारणी बनाते समय भी बालक की आयु, शक्ति और बौद्धिक क्षमता को ध्यान में रखा जाता है।
6. **बालकों के व्यक्तित्व निर्माण में सहायक**—बाल विकास का अध्ययन बाल विकास के विभिन्न पहलुओं की जानकारी प्रदान करता है जिससे माता-पिता, अभिभावकों तथा शिक्षकों को यह जानकारी प्राप्त होती है कि बालक के व्यक्तित्व निर्माण में कौन-से तत्व सहायक हैं और कौन-से बाधक। कौन-से तत्व व्यक्तित्व विकास के लिये परम आवश्यक हैं आदि बातें बाल विकास के अध्ययन से ही ज्ञात होती हैं जिन्हें जानकर बालकों के व्यक्तित्व विकास में सहायता प्रदान की जा सकती है। क्योंकि बालकों में अनेक क्षमतायें होती हैं। ये क्षमतायें तभी विकसित होती हैं जब उचित वातावरण द्वारा उनके विकसित होने पर अवसर प्रदान किया जाता है जैसे—जो बालक कुशाग्र बुद्धि है उसे सामान्य बालकों के साथ शिक्षित नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार मानसिक रूप से विकलांग बच्चों को भी सामान्य बच्चों के साथ शिक्षित नहीं किया जा सकता है।

अन्य क्षेत्रों में भी बालक अलग-अलग प्रकार की रुचियाँ रखते हैं। किसी को खेल का, किसी को चित्रकारी का, किसी को नृत्य का। बालक विकास के अध्ययन से माता-पिता बालकों की रुचियों और क्षमताओं के विषय में जानकारी प्राप्त करते हैं और बालकों की मानसिक योग्यता तथा शारीरिक क्षमताओं को उचित दिशा प्रदान कर बालकों के अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण कर सकते हैं।

बाल विकास की अवस्थाएँ (Stages of Child Development)

बाल विकास की प्रक्रिया को विभिन्न अवस्थाओं में बाँटा जा सकता है। विभिन्न विद्वानों ने विकास की अवस्थाओं को अलग-अलग प्रकार से वर्गीकृत किया है।

यह अवस्थाएँ निम्नलिखित हैं—

I. **रॉस** के अनुसार विकास की अवस्थाएँ—
1. **शैशवावस्था** (Infancy)—जन्म से 5 या 6 वर्ष तक।
2. **बाल्यावस्था** (Childhood)—5 या 6 वर्ष से 12 वर्ष तक।
3. **किशोरावस्था** (Adolescence)—12 वर्ष से 18 वर्ष तक।
4. **प्रौढ़ावस्था** (Adulthood)—18 वर्ष के पश्चात्।

II. **हरलॉक** (1990) द्वारा वर्णित विकास अवस्थाएँ इस प्रकार हैं—
1. **गर्भकालीन अवस्था** (Prenatal Period)—गर्भधारण से जन्म तक।
2. **शैशवावस्था** (Infancy)—जन्म से चौदह दिनों की अवस्था तक।
3. **बचपनावस्था** (Babyhood)—दो सप्ताह के बाद से दो वर्ष तक।
4. **पूर्व बाल्यावस्था** (Early Childhood)—तीन वर्ष से छः वर्ष तक।
5. **उत्तर बाल्यावस्था** (Late Childhood)—छः से चौदह वर्ष तक।
6. **वय: सन्धि या पूर्व किशोरावस्था** (Puberty)—ग्यारह से 17 वर्ष तक।
7. **किशोरावस्था** (Adolescence)—सत्रह से इक्कीस वर्ष तक।
8. **प्रौढ़ावस्था** (Adulthood)—इक्कीस से चालीस वर्ष तक।

III. **कोल (Cole)** ने विकास की अवस्थाओं का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया है—
1. **शैशवावस्था** (Infancy)—जन्म से लेकर दो वर्ष तक।
2. **प्रारम्भिक बाल्यावस्था** (Early Childhood)—2 से 5 तक।
3. **मध्य बाल्यावस्था** (Middle Childhood)—बालक 6 से 12 तथा बालिका 6 से 10।
4. **पूर्व किशोरावस्था या उत्तर बाल्यावस्था** (Pre Adolescence or Late Childhood)—बालक 13 से 14 तक तथा बालिका 11 से 12 तक।
5. **प्रारम्भिक किशोरावस्था** (Early Adolescence)—बालक 15 से 16 तक तथा बालिका 12 से 14 तक।
6. **मध्य किशोरावस्था** (Middle Adolescence)—बालक 17 से 18 तक तथा बालिका 15 से 17 तक।
7. **उत्तर किशोरावस्था** (Late Adolescence)—बालक 19 से 20 तक तथा बालिका 18 से 20 तक।
8. **प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था** (Early Adulthood)—21 से 37 तक।
9. **मध्य प्रौढ़ावस्था** (Middle Adulthood)—35 से 49 तक।
10. **उत्तर प्रौढ़ावस्था** (Late Adulthood)—50 से 64 तक।
11. **प्रारम्भिक वृद्धावस्था** (Early Senescence)—65 से 74 तक।
12. **वृद्धावस्था** (Senescence)—75 से आगे।

कुछ प्रमुख विकास की अवस्थाओं का वर्णन इस प्रकार है—

1. **गर्भकालीन अवस्था** (Prenatal Period)—यह गर्भधारण से जन्म तक की अवस्था है। इस अवस्था की विकास प्रक्रियाओं के अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस अवस्था की तीन उप-अवस्थाएँ हैं—
   - **(i) बीजावस्था** (Germinal Period)—यह गर्भधारण से दो सप्ताह तक की अवस्था है।
   - **(ii) भ्रूणावस्था** (Embryonic Period)—यह दो से 18 सप्ताह तक की प्रक्रिया है। इस अवस्था का जीव भ्रूण कहलाता है। इस अवस्था में मुख्य-मुख्य अंगों का निर्माण होता है।
   - **(iii) गर्भावस्था शिशु की अवस्था** (Period of the Fetus)—यह आठ सप्ताह से जन्म से पूर्व तक की अवस्था होती है।
2. **शैशवावस्था** (Infancy)—यह जन्म से चौदह दिनों की अवस्था है। इस अवस्था में शिशु को नवजात शिशु (New Born Neonate) कहते हैं।
   - इस अवस्था में बालक को अनेक प्रकार की क्रियाएँ; जैसे—चूसना, निगलना, श्वसन, उत्सर्जन इत्यादि करनी पड़ती हैं।
3. **बचपनावस्था** (Babyhood)—यह अवस्था दो सप्ताह से दो वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में बालक पूर्णत: असहाय होता है और अपनी आवश्यकताओं के लिए दूसरों पर निर्भर होता है, परन्तु इस अवस्था में विकास की गति तीव्र होती है।
4. **बाल्यावस्था** (Childhood)—यह अवस्था तीन वर्ष के प्रारम्भ से तेरह चौदह वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था को अध्ययन की सुविधा हेतु दो भागों में बाँटा गया है—(i) पूर्व बाल्यावस्था, (ii) उत्तर बाल्यावस्था।

- बालक में नवीन प्रवृत्तियाँ, जिज्ञासा, सृजनशीलता, अनुकरण इत्यादि का उदय होने लगता है।
- बालक प्रथम बार अकेले सामाजिक वातावरण में प्रवेश करता है और वह विद्यालय जाना प्रारम्भ कर देता है। इस अवस्था में बालक की खिलौनों में रुचि बढ़ जाती है। इस कारण इस उम्र को खिलौनों की उम्र भी कहा जाता है।
- इस अवस्था में बालक मित्रमण्डली में रहना (Group or team) पसन्द करता है।

5. **वय: सन्धि या पूर्व किशोरावस्था** (Puberty)—इसका कुछ भाग उत्तर बाल्यावस्था और कुछ भाग किशोरावस्था में पड़ता है। लगभग दो वर्ष उत्तर बाल्यावस्था और दो वर्ष किशोरावस्था में पड़ते हैं। इसलिए इस अवस्था को (Overlapping Period) कहा गया है। इस अवस्था में मुख्यतः यौन अंगों का विकास होता है। शारीरिक और मानसिक विकास की गति इस अवस्था में बाल्यावस्था से तीव्र रहती है।
6. **किशोरावस्था** (Adolescence)—बाल जीवन की यह अन्तिम अवस्था है। यह 14–15 वर्ष से लगभग 21 वर्ष तक की अवस्था है। लगभग 17 वर्ष तक की अवस्था पूर्व किशोरावस्था कहलाती है तथा इसके बाद की अवस्था उत्तर किशोरावस्था कहलाती है। कुछ लोग इस अवस्था को स्वर्ण आयु (Golden Age) भी कहते हैं।
   - इस अवस्था में विपरीत सेक्स के लोगों के प्रति आकर्षण बढ़ जाता है तथा सामाजिकता और कामुकता इस अवस्था की दो मुख्य विशेषताएँ हैं, जिनसे सम्बन्धित अनेक परिवर्तन बालक-बालिकाओं में इस अवस्था में होते हैं।
7. **प्रौढ़ावस्था** (Adulthood)—यह इक्कीस से चालीस वर्ष तक की अवस्था है। इसमें कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकता है। जन जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में उसका स्वस्थ समायोजन हो। स्वस्थ समायोजन की ही अवस्था में वह उपलब्धियों को प्राप्त कर सकता है।
8. **मध्यावस्था, उत्तर मध्यावस्था** (Middle, Late Adulthood)—यह अवस्था 41 से 64 वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति के अन्दर शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं। इस समय व्यक्ति सुखमय एवं सम्मानजनक जीवन की कामना करता है।
9. **वृद्धावस्था** (Senescence)—यह अवस्था 65 वर्ष के आगे की अवस्था कहलाती है। यह जीवन की अंतिम अवस्था के रूप में जानी जाती है। इस अवस्था में याददाश्त कमजोर पड़ जाती है। इस अवस्था में शारीरिक व मानसिक क्षमताओं में कमी आने लगती है।

शैशवावस्था
(Infancy)

शैशवावस्था विकास क्रम की महत्वपूर्ण अवस्था है। यह अवस्था शिशु जन्म के बाद प्रारम्भ होती है। इस अवस्था के समय के निर्धारण के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान इसे जन्म से दो सप्ताह तक मानते हैं जबकि कुछ इसे जन्म से 3 और 5 वर्ष तक मानते हैं।

हरलॉक के अनुसार—"शैशवावस्था जन्म से दो सप्ताह तक चलती है और उसके बाद बचपनावस्था प्रारम्भ हो जाती है जो दो वर्ष तक चलती है।"

कुप्पूस्वामी के अनुसार—"शैशवावस्था जन्म से तीन वर्ष तक होती है।"

शैशवावस्था की विशेषतायें (Characteristics of Infancy)—शैशवावस्था की अपनी कुछ प्रमुख विशेषतायें होती हैं जो अन्य अवस्थाओं से भिन्न होती हैं। ये प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

1. **अपरिपक्वता** (Immaturity)—शैशवावस्था में शिशु न तो शारीरिक रूप से परिपक्व होता है न ही मानसिक रूप से। अतः वह इस योग्य नहीं होता है कि वह अपना कुछ कार्य स्वयं कर सके। शारीरिक और मानसिक रूप से शक्तिहीन होने के कारण उसमें इतनी क्षमता नहीं होती है कि वह जन्म के बाद शीघ्रता से अपने नये वातावरण के साथ समायोजन कर ले। अतः उसे अपने समायोजन के लिये परिवार के संरक्षण की आवश्यकता होती है।
2. **पराश्रितता** (Dependency)—अपरिपक्वता के कारण शिशु अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहता है। अतः जन्म के बाद वह अपने पालन-पोषण तथा देखभाल के लिये दूसरों पर आश्रित रहता है। गर्भ में तो उसका पोषण प्राकृतिक रूप से माँ के शरीर से होता रहता है किन्तु जन्म के बाद भी उसे जीवित रहने के लिये माँ के दूध की आवश्यकता होती है। अतः शैशवावस्था पराश्रितता की अवस्था होती है।
3. **मूल प्रवृत्यात्मक व्यवहार** (Instinctive Behaviour)—शैशवावस्था में शिशु के सभी व्यवहार मूल प्रवृत्तियों द्वारा निर्धारित रहते हैं इसलिये भूख लगने पर रोता है, प्यार करने पर हँसता है। यदि कोई प्रिय वस्तु छीन लेता है तो रोने लगता है। माँ को देखकर प्रसन्न होता है। अतः इस आयु में शिशु में तर्क और चिंतन की कमी के कारण उसकी क्रियायें और व्यवहार मूल प्रवृत्तियों द्वारा प्रेरित होते हैं।
4. **संवेगशीलता** (Emotionality)—शिशु बड़ा संवेगी होता है। किन्तु उसके संवेग क्षणिक होते हैं जो मूलतः सुखदायक व दुखदायक संवेदनाओं से सम्बन्धित होते है। यदि उसके संवेगों की तुष्टि नहीं होती है तो वह रोने लगता है और तुष्टि होने पर प्रसन्नता का अनुभव करता है।
5. **व्यक्तिगत विभिन्नता** (Individual Differences)—जन्म के बाद सभी शिशु समान नहीं होते हैं। उनमें व्यक्तिगत विभिन्नता पायी जाती है। प्रत्येक शिशु की शारीरिक बनावट, रंग, रूप और व्यवहार एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। कुछ शिशु शान्त होते हैं जबकि कुछ अधिक रोते हैं। इसी प्रकार से कुछ अधिक क्रियाशील होते हैं जबकि कुछ कम क्रियाशील होते हैं।

बाल्यावस्था
(Childhood)

बाल्यावस्था, वास्तव में मानव जीवन का वह स्वर्णिम समय है जिसमें उसका सर्वांगीण विकास होता है। फ्रायड यद्यपि यह मानते हैं कि बालक का विकास पाँच वर्ष की आयु तक हो जाता है, लेकिन बाल्यावस्था में विकास की यह सम्पूर्णता गति प्राप्त करती है और एक परिपक्व व्यक्ति के निर्माण की ओर अग्रसर होती है।

शैशवावस्था के बाद बाल्यावस्था का आरम्भ होता है। यह अवस्था, बालक के व्यक्तित्व के निर्माण की होती है। बालक में इस अवस्था में विभिन्न आदतों, व्यवहार, रुचि एवं इच्छाओं के प्रतिरूपों का निर्माण होता है।

ब्लेयर, जोन्स एवं सिम्पसन के अनुसार—"शैक्षिक दृष्टिकोण से जीवन चक्र में बाल्यावस्था से अधिक कोई महत्त्वपूर्ण अवस्था नहीं है। जो शिक्षक इस अवस्था के बालकों को शिक्षा देते हैं, उन्हें बालकों का, उनकी आधारभूत आवश्यकताओं का, उनकी समस्याओं एवं उनकी परिस्थितियों की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए जो उनके व्यवहार को रूपान्तरित और परिवर्तित करती है।"

"No period during the life cycle is more important than childhood from an educational point of view. Teachers who work at this level should

understand children, their fundamental needs, their problems and the forces which modify and produce behaviour change."

—**Blair, Jones and Simpson**

बाल्यावस्था की विशेषतायें (Characteristics of Childhood)—यद्यपि बाल्यावस्था को 6-12 वर्षायु तक माना जाता है। हरलॉक ने इसे 6 वर्ष से लेकर 12 वर्ष तक के बीच का समय माना है। इस अवस्था में ये विशेषतायें विकसित होती हैं।

1. **शारीरिक व मानसिक स्थिरता** (Physical and Mental Stability)—6 या 7 वर्ष की आयु के बाद बालक के शारीरिक और मानसिक विकास में स्थिरता आ जाती है। वह स्थिरता उसकी शारीरिक व मानसिक शक्तियों को दृढ़ता प्रदान करती है। फलस्वरूप, उसका मस्तिष्क परिपक्व-सा और वह स्वयं वयस्क-सा जान पड़ता है।
2. **मानसिक योग्यताओं में वृद्धि** (Increase in Mental Abilities)—बाल्यावस्था में बालक की मानसिक योग्यताओं में निरन्तर वृद्धि होती है। उसकी संवेदना और प्रत्यक्षीकरण की शक्तियों में वृद्धि होती है। वह विभिन्न बातों के बारे में तर्क और विचार करने लगता है। वह साधारण बातों पर अधिक देर तक अपने ध्यान को केन्द्रित कर सकता है। उसमें अपने पूर्व-अनुभवों को स्मरण रखने की योग्यता उत्पन्न हो जाती है।
3. **वास्तविक जगत के सम्बन्ध** (Relationship with Real World)—इस अवस्था में बालक, शैशवावस्था के काल्पनिक जगत का परित्याग करके वास्तविक जगत में प्रवेश करता है। वह उसकी प्रत्येक वस्तु से आकर्षित होकर उसका ज्ञान प्राप्त करना चाहता है।
4. **सामाजिक गुणों का विकास** (Development of Social Qualities)—बालक, विद्यालय के छात्रों और अपने समूह के सदस्यों के साथ पर्याप्त समय व्यतीत करता है। अतः उसमें अनेक सामाजिक गुणों का विकास होता है, जैसे—सहयोग, सद्भावना, सहनशीलता, आज्ञाकारिता आदि।
5. **रचनात्मक कार्यों में आनन्द** (Pleasure in Creative Activities)—बालक को रचनात्मक कार्यों में विशेष आनन्द आता है। वह साधारणतः घर से बाहर किसी प्रकार का कार्य करना चाहता है, जैसे—बगीचे में काम करना या औजारों से लकड़ी की वस्तुएँ बनाना। उसके विपरीत, बालिका घर में ही कोई-न-कोई कार्य करना चाहती है; जैसे—सीना, पिरोना या कढ़ाई करना।
6. **नैतिक गुणों का विकास** (Development of Moral Traits)—इस अवस्था के आरम्भ में ही बालक में नैतिक गुणों का विकास होने लगता है। **स्ट्रेंग** (Strang) के मतानुसार—"छः, सात और आठ वर्ष के बालकों में अच्छे-बुरे के ज्ञान का एवं न्यायपूर्ण व्यवहार, ईमानदारी और सामाजिक मूल्यों की भावना का विकास होने लगता है।"
7. **बहिर्मुखी व्यक्तित्व का विकास** (Development of Extrovert Personality)—शैशवावस्था में बालक का व्यक्तित्व अन्तर्मुखी (Introvert) होता है, क्योंकि वह एकान्तप्रिय और केवल अपने में रुचि लेने वाला होता है। इसके विपरीत बाल्यावस्था में उसका व्यक्तित्व बहिर्मुखी (Extrovert) हो जाता है, क्योंकि बाह्य जगत् में उसकी रुचि उत्पन्न हो जाती है। अतः वह अन्य व्यक्तियों, वस्तुओं और कार्यों का अधिक-से-अधिक परिचय प्राप्त करना चाहता है।

किशोरावस्था
(Adulthood)

मानव जीवन के विकास की प्रक्रिया में किशोरावस्था का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बाल्यावस्था समाप्त होती है और शुरू होती है किशोरावस्था। यह अवस्था युवावस्था अथवा परिपक्वावस्था तक रहती है। यह सतत् प्रक्रिया है। इसे बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के मध्य का सन्धि काल (Transitional period) कहते हैं। इस अवस्था की विडम्बना होती है—बालक स्वयं को बड़ा समझता है और बड़े उसे छोटा समझते हैं। जबकि **क्रो** एवं **क्रो** ने कहा है—"किशोर ही वर्तमान की शक्ति और भावी आशा को प्रस्तुत करता है।"

"Youth represents the energy of the present and the hope of the future."

—**Crow and Crow**

किशोरावस्था के महत्त्व के विषय में **हैडो कमेटी रिपोर्ट** में कहा गया है—"ग्यारह या बारह वर्ष की आयु में बालक की नसों में ज्वार उठना आरम्भ हो जाता है, इसे किशोरावस्था के नाम से पुकारा जाता है, यदि इस ज्वार का समय रहते उपयोग कर लिया जाये और इसकी शक्ति तथा धारा के साथ-साथ नई यात्रा आरम्भ कर दी जाये तो सफलता प्राप्त की जा सकती है।"

"There is a tide which begins to rise in the veins of youth at the age of eleven or twelve. It is called by the name of adolescence. If that tide can be taken at the flood and new voyage begun in the strength and along the show of its current, we think that it will move on to fortune."

—**Hadow Committee Report**

किशोरावस्था की विशेषतायें (Characteristics of Adulthood)— किशोरावस्था को दबाव, तनाव एवं तूफान की अवस्था माना गया है। इस अवस्था की विशेषताओं को एक शब्द '**परिवर्तन**' (Change) में व्यक्त किया जा सकता है।

जिन परिवर्तनों की ओर ऊपर संकेत किया गया है, उनसे सम्बन्धित विशेषतायें निम्नांकित हैं—

1. **शारीरिक विकास** (Physical Development)—किशोरावस्था को शारीरिक विकास का सर्वश्रेष्ठ काल माना जाता है। इस काल में किशोर के शरीर में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं, जैसे—भार और लम्बाई में तीव्र वृद्धि, माँसपेशियों और शारीरिक ढाँचे मे दृढ़ता, किशोर में दाढ़ी और मूँछ की रोमावलियों एवं किशोरियों में प्रथम मासिक स्राव के दर्शन।
2. **मानसिक विकास** (Mental Development)—किशोर के मस्तिष्क का लगभग सभी दिशाओं में विकास होता है। उसमें विशेष रूप से निम्नलिखित मानसिक गुण पाये जाते हैं—कल्पना और दिवास्वप्नों की बहुलता, बुद्धि का अधिकतम विकास, सोचने-समझने और तर्क करने की शक्ति में वृद्धि, विरोधी मानसिक दशायें (Contrasting Mental Moods)।
3. **घनिष्ठ व व्यक्तिगत मित्रता** (Fast Friendship)—किसी समूह का सदस्य होते हुए भी किशोर केवल एक या दो बालकों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है, जो उसके परम मित्र होते हैं और जिनसे वह अपनी समस्याओं के बारे में स्पष्ट रूप से बातचीत करता है।
4. **व्यवहार में विभिन्नता** (Difference in Behaviour)—किशोर में आवेगों और संवेगों की बहुत प्रबलता होती है। यही कारण है कि वह विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार का व्यवहार करता है, उदाहरणार्थ, किसी समय वह अत्यधिक क्रियाशील होता है और किसी समय अत्यधिक काहिल, किसी परिस्थिति में साधारण रूप से उत्साहपूर्ण और किसी में असाधारण रूप से उत्साहहीन।
5. **स्वतन्त्रता व विद्रोह की भावना** (Freedom and Revolt Feelings)—किशोर में शारीरिक और मानसिक स्वतन्त्रता की प्रबल भावना होती है। वह बड़ों के आदेशों, विभिन्न परम्पराओं, रीति-रिवाजों और अन्धविश्वासों के बन्धनों में न बँधकर स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करना चाहता है। अतः यदि उस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाया जाता है, तो उसमें विद्रोह की ज्वाला फूट पड़ती है।

6. **निश्चित विकास प्रतिमान** (Definite Pattern of Development)—किशोरावस्था में विकास का एक निश्चित स्वरूप होता है इसीलिये विभिन्न विशेषतायें निश्चित आयु-स्तर पर सामान्य विकास क्रम में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। जैसे शारीरिक विकास चरम सीमा पर होता है, यौन परिपक्वता आ जाती है, उच्च संवेगात्मकता के लक्षण दिखायी देते हैं। रुचियों व अभिवृत्तियों में परिवर्तन आ जाता है। किशोर समूह में अपेक्षित व्यवहारों को करने लगता है। असुरक्षा की भावना से घिरा रहता है। काम शक्ति तीव्र हो जाती है। शारीरिक परिवर्तनों में वृद्धि अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है। स्थिरता व समायोजन का अभाव होता है, स्वतंत्रता व विद्रोह की भावना प्रबल रहती है।
7. **शैशवावस्था की पुनरावृत्ति** (Recapitulation of Infancy)—**रॉस** (Ross) ने किशोरावस्था को शैशवावस्था का पुनरावर्तन कहा है। किशोरों के अनेक लक्षण ऐसे होते हैं जो शिशुओं की भाँति दिखायी देते हैं; जैसे—किशोरों में संवेगात्मक अस्थिरता अधिक होती है, उन्हें भी शिशुओं की भाँति वातावरण के साथ समायोजन करना पड़ता है। किशोर भी शिशुओं के समान आकर्षण का केन्द्र बनना चाहता है। शैशवावस्था में कामुकता माँ के प्रति होती है जबकि किशोरावस्था में यह विपरीत लिंग के प्रति दिखायी देती है अतः कहा जा सकता है कि किशोरावस्था शैशवावस्था की पुनरावृत्ति है।

बाल विकास के आयाम
(Dimensions of Child Development)

बाल विकास के आयामों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया गया है—

1. शारीरिक विकास
2. मानसिक विकास
3. संवेगात्मक विकास
4. सामाजिक विकास
5. भाषा विकास
6. नैतिक विकास
7. क्रियात्मक विकास

शारीरिक विकास
(Physical Development)

शारीरिक विकास के अन्तर्गत शरीर के समस्त आंतरिक और बाह्य अंगों का विकास आता है; जैसे—शरीर की लम्बाई, भार, शारीरिक अनुपात, अस्थियों का विकास, माँसपेशियों का विकास, आंतरिक अवयवों का विकास तथा शारीरिक स्वास्थ्य का अध्ययन आता है। शारीरिक विकास के अन्तर्गत यह भी देखा जाता है कि वे कौन-कौन से तत्व हैं जो शारीरिक विकास को प्रभावित करते हैं।

शारीरिक विकास के नियम (Laws of Physical Development)—शारीरिक विकास निम्नलिखित नियमों के अनुसार होता है—

1. **मस्तकाधोमुखी विकास का नियम** (Law of Cephalocaudol Development)—यह नियम शारीरिक विकास की दिशा को निर्देशित करता है। इस नियम के अनुसार पहले सिर के भाग और फिर क्रमशः धड़, हाथों और पैरों का विकास होता है।
2. **विकास चक्र का नियम** (Law of Cyclic Development)—मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि सम्पूर्ण मानव-विकास की प्रक्रिया अग्रलिखित चार चक्रों में होती है—

I. प्रथम चक्र : जन्म से 2 वर्ष तक
II. द्वितीय चक्र : 2 से 11 वर्ष तक
III. तृतीय चक्र : 11 से 15 वर्ष तक
IV. चतुर्थ चक्र : 15 से 18 वर्ष तक।

प्रथम चक्र में शारीरिक विकास बड़ी तीव्रता से होता है। द्वितीय चक्र में विकास की गति अपेक्षाकृत धीमी रहती है। तृतीय चक्र में विकास की गति पुनः तीव्र हो जाती है और चतुर्थ चक्र में विकास की गति पुनः धीमी हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि शारीरिक विकास एक समान गति से नहीं होता है। विकास की यह गति पृथक् आयु-अन्तराल में भिन्न-भिन्न होता है।

हरलॉक के अनुसार—"विकास लयात्मक होता है, नियमित नहीं।"

"Growth in rythmic not regular." —**Hurlock**

शारीरिक विकास की विशेषताएँ (Characteristics of Physical Development)—बालक का शारीरिक विकास मुख्यतः दो प्रकार से होता है—

1. **शारीरिक रचना का विकास**—इसके अन्तर्गत शरीर का आकार, भार, ऊँचाई, शारीरिक अंगों का शरीर के साथ अनुपात, हड्डियाँ, दाँत आदि का विकास सम्मिलित है।
2. **शारीरिक-क्रिया विकास** (Physiological Development)—इसके अन्तर्गत तंत्रिका-तंत्र (Nervous System), हृदय (Heart) और रुधिर तन्त्र (Circulatory System), श्वसन-तन्त्र (Respiratory System), पाचन तंत्र (Digestive System), माँसपेशियों (Muscles), अन्तःस्रावी ग्रन्थियों आदि का विकास सम्मिलित है।

1. **शैशवावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development in Infancy)**

शैशवावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन निम्नलिखित हैं—

(i) **भार** (Weight)—जन्म के समय और पूरी शैशवावस्था में बालक का भार बालिका से अधिक होता है। जन्म के समय बालक का भार लगभग 7.15 पौंड और बालिका का भार लगभग 7.13 पौंड होता है। पहले 6 माह में शिशु का भार दुगुना और एक वर्ष के अन्त में तिगुना हो जाता है।

(ii) **लम्बाई** (Length)—शैशवावस्था में 3 वर्ष तक बच्चों के विकास की गति अत्यन्त तीव्र होती है। जन्म के समय शिशु की लम्बाई औसत रूप से 50 सेमी. होती है। प्रथम वर्ष के अन्त में वह 67 से 70 सेमी., दूसरे वर्ष के अन्त तक 77 सेमी. से 82 सेमी. तक होती है तथा 6 वर्ष तक लगभग 100 सेमी. से 110 सेमी. लम्बा हो जाता है।

(iii) **सिर व मस्तिष्क** (Head and Brain)—नवजात शिशु की सिर की लम्बाई उसके शरीर के कुल लम्बाई की 1/4 होती है। पहले 2 वर्षों में सिर बहुत तीव्र गति से बढ़ता है तथा उसका भार शरीर के भार के अनुपात से अधिक होता है।

(iv) **हड्डियाँ** (Bones)—नवजात शिशु की हड्डियाँ छोटी और संख्या में 300 होती हैं। सम्पूर्ण शैशवावस्था में ये छोटी, कोमल, लचीली होती हैं। हड्डियाँ कैल्शियम, फॉस्फोरस और अन्य खनिज लवणों की सहायता से मजबूत होती हैं। इस आयु में शिशुओं के भोजन में इन लवणों की अधिकता होनी चाहिये।

(v) **माँसपेशियाँ** (Muscles)—शिशु की माँसपेशी का भार उसके शरीर के कुल भाग का 23% होता है। यह भार धीरे-धीरे बढ़ता चला जाता है। उसकी भुजाओं का विकास तीव्र गति से होता है। प्रथम दो वर्षों में भुजाएँ दुगुनी और टांगें डेढ़ गुनी हो जाती हैं। छः वर्ष की आयु तक माँसपेशियों में लचीलापन होता है।

(vi) अन्य अंग (Other Organs)—छठे माह में दूध के दाँत निकलने प्रारम्भ हो जाते हैं। सबसे पहले नीचे के अगले दाँत निकलते हैं और एक वर्ष की आयु तक उनकी संख्या 8 हो जाती है। लगभग 4 वर्ष की आयु तक दूध के सभी दाँत निकल आते हैं। नवजात शिशु का सिर शरीर की अपेक्षा बड़ा होता है। जन्म के समय हृदय की धड़कन कभी तेज व कभी धीमी होती है। जैसे-जैसे हृदय बड़ा होता है, धड़कन में स्थिरता आती जाती है।

शिशु के आन्तरिक अंगों (पाचन अंग, फेफड़ा, स्नायु मंडल, रक्त संचार अंग, जनन अंग और ग्रन्थियाँ) का विकास तीव्र गति से होता है। शैशवावस्था के प्रथम तीन वर्ष विकास काल के होते हैं। अन्तिम तीन वर्षों में बच्चा मजबूती प्राप्त करता है।

2. बाल्यावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development in Childhood)

बाल्यावस्था जीवन का अनोखा काल होता है। ये अवस्था 6 से 12 वर्ष तक मानी जाती है। बाल्यावस्था के प्रथम तीन वर्षों में (6 से 9 वर्ष) शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है और बाद के तीन वर्षों में इस विकास में स्थिरता आ जाती है। बाल्यावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन निम्नलिखित हैं—

(i) भार (Weight)—इस अवस्था में बालक के भार में पर्याप्त वृद्धि होती है। 9 या 10 वर्ष की आयु तक बालकों का भार बालिकाओं से अधिक होता है। इसके बाद बालिकाओं का भार अधिक होना प्रारम्भ हो जाता है।

(ii) लम्बाई (Length)—बाल्यावस्था में शरीर की लम्बाई कम बढ़ती है। इन सब वर्षों में लम्बाई 2 या 3 इंच ही बढ़ती है।

(iii) हड्डियाँ (Bones)—इस अवस्था में प्रथम 4-5 वर्षों में हड्डियों की संख्या में वृद्धि होती है। 10-12 वर्ष की आयु में हड्डियों का दृढ़ीकरण होता है।

(iv) दाँत (Teeth)—बाल्यावस्था के आरम्भ में दूध के दाँत गिरने लगते हैं और उनके स्थान पर स्थायी दाँत निकलने लगते हैं। 12-13 वर्ष की अवस्था तक सभी स्थायी दाँत निकल आते हैं।

(v) माँसपेशियाँ (Muscles)—माँसपेशियों का भार 8 वर्ष तक कुल भार का 27% हो जाता है। बालिकाओं की माँसपेशियाँ बालकों की अपेक्षा अधिक विकसित होती हैं।

(vi) अन्य अंगों का विकास (Development of Other Organs)—बाल्यावस्था में मस्तिष्क आकार और तौल की दृष्टि से पूर्ण विकसित हो जाता है। बाल्यावस्था में सिर के आकार में क्रमशः परिवर्तन होता रहता है। इस अवस्था में बच्चों के लगभग सभी अंगों का पूर्ण विकास हो जाता है तथा वह अपनी शारीरिक गति पर नियंत्रण रखना सीख जाते हैं।

3. किशोरावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development in Adolescence)

13 से 21 वर्ष की अवस्था, किशोरावस्था कहलाती है जो उत्तर बाल्यावस्था की समाप्ति से प्रारम्भ होती है। शारीरिक विकास की दृष्टि से यह अवस्था अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती है क्योंकि किशोरावस्था की समाप्ति तक बालक और बालिका पूर्ण शारीरिक परिपक्वता प्राप्त कर लेते हैं। किशोरावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन निम्नलिखित हैं—

(i) किशोरावस्था में लम्बाई में वृद्धि (Increase in Height During Adolescence)—किशोरावस्था में यह देखा गया है कि बाल्यावस्था के पश्चात् बालिकायें अपनी आयु के बालकों से लम्बाई में अधिक होने लगती हैं। लेकिन पूर्व किशोरावस्था के समाप्त होते-होते लड़के अपनी आयु की लड़कियों से अधिक लम्बे हो जाते हैं। अध्ययनों द्वारा भी यह देखा गया है कि बालक 14 वर्ष की आयु तक अपनी लम्बाई का केवल 57 प्रतिशत ही वृद्धि कर पाते हैं जबकि बालिकायें इस समय तक अपनी लम्बाई का लगभग 90 प्रतिशत प्राप्त कर लेती हैं। लगभग 18 वर्ष के पश्चात लड़कियों की लम्बाई की वृद्धि रुक जाती है।

लम्बाई की वृद्धि पर पिट्यूटरी ग्रन्थि के स्राव का प्रभाव पड़ता है जिन बालकों के स्राव कम होता है उनकी लम्बाई की वृद्धि कम होती है।

(ii) किशोरावस्था में भार में वृद्धि (Increase in Weight During Adolescence)—शारीरिक भार में वृद्धि सबसे अधिक किशोरावस्था में ही होती है किन्तु बालक व बालिकाओं के भार में वृद्धि में थोड़ा अन्तर रहता है। 11 से 14 वर्ष की बीच बालिकाओं का वजन समान आयु के लड़कों से अधिक हो जाता है। परन्तु 15 के बाद बालक-बालिकाओं की अपेक्षा भार में अधिक हो जाते हैं।

किशोरावस्था में भार अस्थियों और माँसपेशियों के विकास के कारण बढ़ता है।

(iii) शारीरिक अंगों का अनुपात (Proportion of Different Body Organs)— किशोरावस्था में पूर्ण शारीरिक विकास होने के कारण लगभग शरीर के सभी अंग अनुपात में आ जाते हैं। सिर, मुँह, भुजायें, पैर तथा धड़ सभी शारीरिक अवयव समुचित अनुपात ग्रहण कर लेते हैं फलस्वरूप किशोर प्रौढ़ आकृति ग्रहण कर लेता है।

(iv) त्वचा तथा बाल (Skin and Hair)—इस अवस्था में चेहरे की बनावट में आश्चर्यजनक परिवर्तन आते हैं। बालिकाओं की त्वचा में निखार आ जाता है और बालकों के चेहरे पर दाढ़ी, मूँछ आ जाने के कारण उनके चेहरे की कोमलता समाप्त हो जाती है। बालकों की आवाज में कोमलता समाप्त हो जाती है जबकि बालिकाओं की आवाज कोमल हो जाती है।

(v) दाँतों का विकास (Development of Teeth)—किशोरावस्था में दाँतों का विकास समान रूप से नहीं होता है इसमें व्यक्तिगत भिन्नता पायी जाती है। सामान्यतः 13 वर्ष की आयु तक बालकों के लगभग 27–28 दाँत निकल आते हैं, शेष चार दाँतों का विकास किशोरावस्था में होता है।

(vi) माँसपेशियों का विकास (Development of Muscles)—इस अवस्था में माँसपेशियों का विकास तीव्र गति से होता है। लगभग 15 वर्ष की आयु तक माँसपेशियों का वजन शरीर के वजन का 33 प्रतिशत हो जाता है। फिर प्रति वर्ष लगभग 11 प्रतिशत की वृद्धि होती है। माँसपेशियों का विकास शरीर को सुडौलता प्रदान करता है और भार में वृद्धि करता है।

(vii) विभिन्न शारीरिक अंगों का विकास (Development of Different Body Organs)—शरीर के विभिन्न अंगों का विकास इस अवस्था में पूर्ण हो जाता है साथ ही वे अनुपात में आ जाते हैं। हृदय बीस वर्ष की आयु तक पूर्ण विकसित हो जाता है। हड्डियाँ, माँसपेशियाँ, ज्ञानेन्द्रियाँ, फेफड़े जन्म की अपेक्षा बीस गुना अधिक बढ़ जाते हैं। अस्थियाँ जन्म के समय 270 होती हैं जो 14 वर्ष की आयु में बढ़कर 350 हो जाती हैं और फिर प्रौढ़ावस्था में घटकर पुनः 206

रह जाती हैं क्योंकि छोटी और कोमल अस्थियाँ आपस में मिलकर दृढ़ हो जाती हैं जिससे उनकी संख्या कम हो जाती है। अस्थियों के विकास पर पौष्टिक भोजन और व्यायाम का प्रभाव पड़ता है।

(viii) शारीरिक परिवर्तन (Physical Changes)—किशोरावस्था में यौन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन होते हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है—

(अ) यौन सम्बन्धी मुख्य परिवर्तन (Primary Sex Changes)

(ब) यौन सम्बन्धी गौण परिवर्तन (Secondary Sex Changes)

मानसिक विकास (Mental Development)

मानसिक विकास का केन्द्र बिन्दु बुद्धि (Intelligence) है। इसी से मानसिक सजगता आती है एक सामान्य बुद्धि बालक मंद बुद्धि बालक की तुलना में अपने वातावरण के साथ आसानी से समायोजन स्थापित कर लेता है।

हरलॉक के अनुसार—"मानसिक दृष्टि से परिपक्व व्यक्ति वह है जो बौद्धिक रूप से चरम सीमा तक पहुँच चुका है।"

"Mentally a mature individual is one whose intelligence has wrist its maximum growth."

जेम्स ड्रेवर (1984) ने मानसिक विकास को परिभाषित करते हुए लिखा है कि—"व्यक्ति के जन्म से लेकर परिपक्वावस्था तक की मानसिक क्षमताओं एवं मानसिक कार्यों के उत्तरोत्तर प्रकटन (Appearence) एवं संगठन (Organisation) की प्रक्रिया को मानसिक विकास की प्रक्रिया कहा जाता है।"

मानसिक विकास की विशेषताएँ (Characteristics of Mental Development)—बालक के मानसिक विकास की निम्न विशेषताएँ हैं—

(1) मानसिक विकास शिशु की आयु के साथ बढ़ता रहता है।

(2) मानसिक विकास के फलस्वरूप बालक की बुद्धि एवं अभिरुचियों में फैलाव होता है।

(3) नवीन विचारों एवं चिन्तन का विकास मानसिक विकास के फलस्वरूप होता है।

(4) मानसिक विकास के साथ-साथ बालकों को समय का सही-सही ज्ञान हो जाता है।

(5) मानसिक विकास के साथ-साथ बालक अपनी मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति हावभाव के माध्यम से करने लगता है।

(6) मानसिक विकास की एक विशेषता यह है कि इससे बालकों में योजना बनाने की क्षमता का विकास हो जाता है।

(7) बौद्धिक विकास में क्रमबद्धता पायी जाती है।

(8) इसके विकास से बालक गत अनुभवों से लाभ उठाने लगता है।

(9) इसके विकास से बालकों में निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो जाता है।

1. शैशवावस्था में मानसिक विकास (Mental Development in Infancy)

जन्म से दो सप्ताह तक—जन्म के समय शिशु निरीह अवस्था में होता है, वह केवल अपनी शारीरिक दशाओं के अनुसार प्रतिवर्त क्रियायें; जैसे—रोना, सांस लेना, अधिक सर्दी लगने पर कांपना, आदि प्रदर्शित करता है। कभी-कभी तीव्र ध्वनियों को सुनकर चौंक जाता है। जन्म के दूसरे सप्ताह में वह तीव्र रोशनी की ओर भी ध्यान देने लगता है।

बचपनावस्था में बौद्धिक विकास (तीसरे सप्ताह से दूसरे वर्ष के अंत तक)—इस अवधि में शिशु माँ को पहचानने लगता है। इसलिये रोता हुआ बालक माँ की गोद में जाने पर चुप हो जाता है, भूख लगने और पीड़ा होने पर वह गर्दन इधर-उधर घुमाकर यह देखने का प्रयास करता है कि माँ उसके पास है या नहीं।

प्रथम माह—प्रथम माह में वह अपने दुख, सुख का अनुभव करने लगता है। इसके अतिरिक्त वह अपने आसपास व्यक्तियों की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति को स्पष्ट रूप से महसूस करने लगता है—इसलिये अकेला छोड़े जाने पर रोने लगता है और माँ तथा अन्य व्यक्तियों के सामने आने पर उनकी गोद में जाने के लिये हाथ उठा देता है या उन्हें पकड़ने की चेष्टा करता है।

द्वितीय माह—दो माह का बालक वस्तुओं की ओर अधिक ध्यान देने लगता है इसलिये सिर को इधर-उधर घुमाने लगता है। जैसे व्यक्ति और वस्तुयें उसके सामने आती हैं उन्हें ध्यान से देखने लगता है। माँ को देखकर प्रसन्न होता है और अस्पष्ट ध्वनि मुँह से निकालने लगता है।

तीसरा माह—तीन माह का शिशु वस्तुओं पर और अधिक ध्यान केन्द्रित करने लगता है। वस्तुओं को हाथों से कसकर पकड़ लेता है।

हरलॉक के अनुसार—"तीन माह की आयु में बालक उत्तेजनाओं के प्रति प्रतिक्रियायें प्रदर्शित करता है, विचित्र स्थितियों के प्रति सचेत होता है, उठाने पर सफलतापूर्वक समायोजन करता है।"

इस प्रकार तीन माह के शिशु में ध्यान और विवेक की योग्यता का विकास होने लगता है।

चतुर्थ माह—इस अवधि में शिशु क्रोध और स्नेह में अन्तर समझने लगता है। इस समय उसमें जिज्ञासा का भाव भी देखा जाता है। क्योंकि जब उसके पास से वस्तुओं को हटा लिया जाता है तो वह उन्हें खींचने का प्रयास करता है। इस अवधि में भाषा विकास भी हो जाता है, वह विभिन्न प्रकार के व्यंजनों का उच्चारण मुँह से करता है।

पाँचवाँ माह—माँ को अच्छी तरह पहचानने लगता है इसलिये उसी के सम्पर्क में रहना चाहता है। माँ के साथ प्रसन्नता का अनुभव करता है और माँ से अलग होने पर कंपन करता है। अपने आस-पास रहने वाले व्यक्तियों को पहचानता है। आवाजों की ओर ध्यान देता है। विभिन्न वस्तुओं को पकड़ने के लिये हाथों को आगे बढ़ाता है।

छठवाँ माह—इस अवस्था में बालक में अनुकरण की क्षमता का विकास हो जाता है। वह बड़ों के हावभावों का अनुकरण करने लगता है। दुख की अवस्था में क्रोध का प्रदर्शन करता है। सही समय पर दूध न मिलने पर क्रोधित होता है और दूध मिलने पर मुस्कराता है।

सातवाँ माह—सात माह का शिशु विभिन्न वस्तुओं को स्पष्ट रूप से पहचानने लगता है; जैसे यदि उसे दूध के समय पानी देने पर वह स्पष्ट रूप से नकारात्मक उत्तर देता है। इस अवस्था में उसी अभिरुचि का भी विकास हो जाता है। जो वस्तुयें व क्रियायें उसे पसंद नहीं होती हैं उनकी उपस्थिति में रोता है इस समय उसकी इन्द्रियों का पर्याप्त विकास हो जाता है अतः ठंडा, गर्म, खट्टा, मीठा, प्रकाश, अंधकार आदि वस्तुओं का ज्ञान होने लगता है।

आठवाँ माह—अनुकरण शक्ति का विकास और अधिक हो जाता है। वह अपनी विभिन्न वस्तुओं को पहचानता है इसलिये उसका खिलौना दूसरे बालक द्वारा ले लिये जाने पर क्रोधित हो जाता है। संकेतों को समझने लगता है और उसके अनुरूप प्रतिक्रिया प्रदर्शित करता है। अन्य समान आयु के बालकों के साथ खेलने का प्रयास भी करता है।

नवाँ माह—शिशु की अवबोधन शक्ति बढ़ जाती है। समान आयु के बच्चों को पहचानकर उनके साथ खेलता है। सामूहिक क्रियाओं में उसे आनंद आता है।

दसवाँ माह—इस अवस्था में वह सहयोग और विरोध दोनों का प्रकाशन करता है। इस समय ईर्ष्या प्रवृत्ति भी बालकों में देखी जाती है। अनुकरण क्षमता और अधिक बढ़ जाती है। अपनी भाषा द्वारा दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करता है।

ग्यारहवाँ व बारहवाँ माह—भाषा विकास अधिक हो जाता है। इस समय वह अस्पष्ट एक अक्षरीय भाषा का प्रयोग करता है। भिन्नता की भावना का विकास होता है जिससे अन्य लोगों के साथ रहना भी सीखता है। निरीक्षण क्षमता का विकास होता है फलस्वरूप वह विभिन्न वस्तुओं को उठाकर और छूकर देखता है।

प्रथम व द्वितीय वर्ष—इस अवस्था में बालक के बोलने की शक्ति का विकास हो जाता है। वह अपनी भाषा द्वारा दूसरों तक अपने विचारों को पहुँचाने का प्रयास करता है। एक शब्दीय वाक्यों को बोलता है। समूह में रहना पसन्द करता है। समूह के विचारों को ग्रहण करता है और सामाजिक क्रियाओं का अनुकरण करने लगता है। दो वर्ष का बालक छोटे-छोटे वाक्यों को बोलने लगता है। भाषा के माध्यम से उसका सामाजिक सम्पर्क बढ़ता है। शब्द भण्डार में वृद्धि होती है। कल्पना, चिन्तन और स्मरण शक्ति का भी विकास होता है। बालक छोटे-छोटे शब्दों, अंकों आदि को सीख जाता है।

2. **बाल्यावस्था में मानसिक विकास (Mental Development in Childhood)**

तीसरा वर्ष—इस अवस्था में जिज्ञासा शक्ति बढ़ती है अतः बालक विभिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रश्न करने लगता है। मानसिक शक्ति का विकास होता है जिससे वह अपना नाम, कुछ फल, अपने शरीर के अंग आदि को संकेतों से बता देता है। दैनिक प्रयोग की विभिन्न वस्तुयें माँगने पर उठाकर ले आता है।

चौथा वर्ष—स्कूल जाने की अवस्था होने के कारण इस समय बालक को सौ तक के अंकों का ज्ञान हो जाता है अतः पैसों के बारे में जानता है। इसके अतिरिक्त तर्क का प्रयोग कर लेता है। छोटी बड़ी रेखाओं और आकारों में अंतर कर लेता है। लिखना भी आरंभ कर देता है तथा स्कूल जाने के कारण उसकी दिनचर्या तथा क्रियाओं में संतुलन आ जाता है।

पाँचवाँ वर्ष—इस अवस्था में उसे विभिन्न वस्तुओं के तुलनात्मक अध्ययन की जानकारी होती जाती है वह अपना नाम, पता, परिवार के लोगों का नाम तथा पास-पड़ोस के बारे में जानकारी रखता है। भाषा विकास अधिक हो जाता है, वाक्य बनाने की क्षमता आ जाती है, सरल तथा कुछ सीमा तक जटिल वाक्य बनाने लगता है। गणितीय ज्ञान में भी वृद्धि होती है। विभिन्न प्रत्ययों जैसे—रंग, समय, दिन, भार, संख्या आदि का ज्ञान हो जाता है। दैनिक जीवन के उपयोग में आने वाली विभिन्न वस्तुओं के सही उपयोग को समझने लगता है।

छठवाँ वर्ष—इस आयु में बालक का भाषा विकास और अधिक हो जाता है। विभिन्न वस्तुओं का प्रत्ययात्मक ज्ञान बढ़ता है। गणितीय योग्यता में भी वृद्धि होती है। 100 तक की गिनती आसानी से गिन लेता है। चित्रों से विभिन्न वस्तुओं का पहचान लेता है। अनुकरण की क्षमता बढ़ जाती है जिससे आसपास की वस्तुओं और व्यक्तियों के अनुकरण को सीखने की क्षमता का विकास होता है। ध्यान की क्षमता में भी विकास होता है। विभिन्न प्रश्नों के उत्तर अपनी तर्क क्षमता के आधार पर देने लगता है।

सातवाँ वर्ष—स्कूल जाने के कारण इस अवस्था में बालक के भाषा विकास में प्रगति होती है। वह सरल से जटिल वाक्यों की रचना करने लगता है। विभिन्न प्रत्ययों; जैसे—स्वाद, रंग, रूप, गंध आदि का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। विभिन्न वस्तुओं में परस्पर समानता और अंतर समझने लगता है। जिज्ञासा प्रवृत्ति बढ़ जाने के कारण छोटे-छोटे प्रश्न पूछता है। छोटी-छोटी समस्याओं का हल अपनी तर्क-शक्ति के आधार पर करता है। इस प्रकार इस अवस्था तक बालक में जिज्ञासा, स्मृति, तर्क, चिन्तन, समस्या समाधान तथा भाषा का विकास बहुत अधिक मात्रा में हो जाता है।

आठवाँ वर्ष—भाषा और अधिक विकसित हो जाती है। भाषा की अभिव्यक्ति में प्रवाह आ जाता है। वाक्य रचना शुद्ध हो जाती है। बालक 15-16 शब्दीय वाक्य आसानी से बोल लेता है। विभिन्न समस्याओं के समाधान के सम्बन्ध में उचित निर्णय लेने का प्रयास करता है। समूह में रहने की प्रवृत्ति का विकास होता है। वह घर की अपेक्षा बाहर रहना अधिक पसन्द करता है। स्मरण शक्ति का विकास अधिक हो जाता है जिससे वह छोटी-छोटी कविताओं और कक्षा में बतायी गयी विभिन्न बातों को आसानी से याद कर लेता है।

नवाँ वर्ष—इस अवस्था में बालक की भाषा, स्मृति, कल्पना, चिन्तन और ध्यान आदि क्षमताओं का और अधिक विकास हो जाता है। इस अवस्था में वह समय, दूरी, ऊँचाई, लम्बाई, दिन, समय, तारीख, महीना और वर्ष आदि को आसानी से बता देता है, विभिन्न प्रकार के सिक्कों और नोटों का सही मूल्य बता सकता है। पढ़ाई की तरफ ध्यान केन्द्रित हो जाता है, विद्यालयी क्रियाओं में रुचि लेता है। सामाजिक सहभागिता बढ़ जाती है।

दसवाँ वर्ष—इस अवस्था में उसकी वाक्शक्ति बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त निरीक्षण, ध्यान, तर्क, स्मरण और रुचियों का भी उत्तरोतर विकास होता है। वह 20-25 शब्दों के वाक्यों को आसानी से बोल लेता है। वह छोटी-छोटी कहानियाँ, चुटकले, कक्षा की घटनायें, कवितायें आदि आसानी से याद कर लेता है और आसानी से दोहराता भी है। बालक के जीवन में नियमितता आ जाती है। आज्ञापालन की आदत का विकास होता है। गणितीय योग्यता का विकास भी होता है।

ग्यारहवाँ वर्ष—इस अवस्था में बालक विभिन्न वस्तुओं की समानता और भिन्नता के बारे में अधिकाधिक जानकारी रखता है। गणितीय ज्ञान भी बहुत अधिक विकसित हो जाता है। अपने आस-पास की विभिन्न वस्तुओं की जानकारी रखता है तथा उनसे सम्बन्धित समस्याओं के उचित समाधान भी प्रस्तुत करता है तथा अपने ज्ञानात्मक विकास के लिये निरंतन प्रत्यत्नशील रहता है। विभिन्न प्रकार की रुचियों का विकास होता है; जैसे—खेल, अभिनय, संगीत, नृत्य आदि।

बारहवाँ वर्ष—इस अवस्था में बालक की चिन्तन और तर्क शक्ति बढ़ती है। अनुभवों के आधार पर वह विभिन्न समस्याओं का समाधान स्वयं करने लगता है। तर्क-शक्ति के आधार पर विभिन्न समस्याओं के परिणाम के बारे में पूर्व ही अनुमान लगा लेता है। जिज्ञासा बढ़ जाती है अतः विभिन्न परिस्थितियों का निरीक्षण कर स्वयं ही जानने का प्रयास करता है। शब्द भण्डार बढ़ जाता है। वाक्-शक्ति अधिक हो जाती है। वाक्य रचना में शुद्धता आ जाती है। विभिन्न प्रश्नों के तर्कपूर्ण उत्तर देने में सफल रहता है। ध्यान और एकाग्रता बढ़ती है अब यह अधिक समय तक किसी कार्य को लगातार कर सकता है। विभिन्न प्रकार की रुचियों का विकास होता है। खेलो और मनोरंजन के प्रति रुचि बढ़ती है। यदि इस अवस्था में सीखने का अवसर मिले तो बालक एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान रख सकता है।

3. **किशोरावस्था में मानसिक विकास (Mental Development in Adolescence)**

शारीरिक विकास के समान, मानसिक विकास भी किशोरावस्था में बहुत तीव्रगति से होता है। **वुडवर्थ** (Woodworth) के अनुसार, "मानसिक विकास पन्द्रह से बीस वर्ष की आयु में अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच जाता है।"

इस अवस्था में मानसिक विकास की प्रमुख अवस्थायें निम्नलिखित हैं—

(i) रुचियों का विकास—इस समय किशोर बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न बनना चाहते हैं। इस समय विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित रुचियों का विकास होता है। प्रशिक्षण, उपयुक्त वातावरण तथा माता-पिता और शिक्षकों का सहयोग मिलने पर उनमें सृजनात्मकता का विकास होता है। किशोरों की रुचियाँ अध्ययन, खेल-कूद, ललितकला किसी भी क्षेत्र में हो सकती हैं। रुचियाँ सीखने में सहायक होती हैं। बालिकायें नृत्य, संगीत, ड्रामा, चित्रकारी आदि में रुचि रखती हैं जबकि बालक मानसिक खेलों तथा प्रतिस्पर्धात्मक कार्यों में रुचि रखते हैं।

(ii) सीखने की क्षमता का विकास—बहुमुखी रुचियों के विकास के कारण किशोर बालक विभिन्न क्षेत्रों में व्यावहारिक, सैद्धान्तिक वैज्ञानिक तथा यांत्रिक क्रियाओं को सीखने का प्रयास करते हैं।

(iii) मानसिक योग्यताओं का विकास—इस अवस्था में मानसिक विकास में परिपक्वता आने से किशोरों में; जैसे—सोचने-विचारने, अंतर करने, निर्णय लेने तथा समस्याओं का समाधान करने की मानसिक योग्यतायें विकसित हो जाती हैं।

(iv) बुद्धि का अधिकतम विकास—किशोरावस्था में बुद्धि का विकास भी अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच जाता है जिससे बालकों में निम्नलिखित बौद्धिक क्षमतायें दृष्टिगत होती हैं—

(अ) तर्क शक्ति
(ब) स्मरण शक्ति
(स) कल्पना शक्ति
(द) भाषा का विकास
(य) चिन्तन शक्ति
(र) ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता का विकास

संवेगात्मक विकास
(Emotional Development)

संवेगात्मक विकास मानव जीवन के विकास व उन्नति के लिये आवश्यक है। यह विकास मानव जीवन को बहुत प्रभावित करता है व उसी से उसके व्यक्तित्व निर्माण में सहायता मिलती है। जब व्यक्ति अपने संवेगों; जैसे—भय, क्रोध, प्रेम आदि का सही प्रकाशन करना सीख लेता है तो उसे संवेगात्मक विकास कहते हैं।

प्राणी के विकास क्रम में संवेगात्मक विकास का बड़ा महत्व है। संवेग प्राणी के व्यक्तित्व का निर्धारण करते हैं। यदि किसी व्यक्ति का संवेगात्मक विकास सुचारु रूप से नहीं होता है तो उसका व्यक्तित्व निर्माण भी सही प्रकार से नहीं होता है क्योंकि संवेगों द्वारा ही व्यक्ति में 'सृजन' और 'विनाश' की भावनायें विकसित होती हैं। 'सृजन' की भावना सन्तुलित व्यक्तित्व निर्माण का द्योतक है और 'विनाश' की भावना व्यक्तित्व के विघटन का सूचक है। 'प्रेम' संवेग प्राणी को आनन्द प्रदान करता है और उसे रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित करता है। इसके विपरीत दुख, घृणा तथा ईर्ष्या सृजन के लिए अभिशाप है। ये प्राणी को विनाश की ओर ले जाते है। प्राणी के जीवन में संवेगात्मक विकास समान गति से नहीं होता है। प्रत्येक अवस्था में इसके विकास की गति भिन्न-भिन्न होती है।

वुडवर्थ के अनुसार, "संवेग व्यक्ति की गति में अर्थात् आवेश में आने की अवस्था है।"

"Emotion is a 'moved' or 'stirred up' state of indivisuals."

मैकडूगल ने इसे मूल प्रवृत्ति से सम्बद्ध बताते हुए कहा है कि—"संवेग एक प्रकार का अनुभव है जो किसी न किसी मूल प्रवृत्ति से सम्बद्ध रहता है।"

"Emotion is a type of experience which is related to any type of innate instict."

संवेगात्मक विकास की विशेषताएँ (Characteristics of Emotional Development)—संवेगात्मक विकास की कुछ विशेषताएँ निम्नवत् चिह्नित की गई हैं—

- संवेगात्मक विकास शिशु, बाल्य, किशोर एवं अन्य अवस्थाओं में एक क्रम से होता है।
- बालक ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है उसके संवेगों के विकास में जटिलता आती जाती है।
- संवेगात्मक विकास में जो अनुभव होते हैं उनकी वृद्धि से परिपक्वता आती है।
- संवेगात्मक विकास संवेगों के प्रशिक्षण (संवेगों पर नियन्त्रण, उचित ढंग से और यथा आवश्यकता प्रकट करना, एक संवेग में दूसरे संवेग को विलय करना और उनका शोधन करना) पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है।
- संवेगात्मक विकास प्राणी के व्यवहारों से सम्बन्धित होता है।

1. शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Infancy)

- शिशुओं का संवेगात्मक विकास धीरे-धीरे अस्पष्टता की ओर होता है।
- विशिष्ट संवेग मन्द गति के स्वभाव के साथ जुड़ता है।
- शारीरिक आयु के साथ-साथ संवेगात्मक विकास में तीव्रता होती है।
- शैशवावस्था में मुख्यतया भय, क्रोध व प्रेम आदि तीन ही संवेगों का विकास होता है।
- शिशु थोड़ी-थोड़ी देर में अपने संवेगों को बदलते रहते हैं। वो कभी रोता है, कभी हँसता है और कभी-कभी दोनों का प्रकटीकरण साथ-साथ ही करने लगता है।
- शैशवावस्था के अन्तिम चरण में वातावरण संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने लगता है।

2. बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Childhood)

- इस अवस्था में संवेगों में स्थायित्व आना प्रारम्भ हो जाता है।
- बालक संवेग व समाज के नियमों में समायोजन करने लगता है।
- वह प्रत्येक क्रिया के प्रति प्रेम, ईर्ष्या, घृणा व प्रतिस्पर्धा की भावना प्रकट करने लगता है।
- माता-पिता द्वारा बताये कार्य के प्रति वह हाँ या न कहकर चुप रहता और बाद में झूठ बोलकर अपने को उपेक्षा से बचाता है।
- इस अवस्था के अन्तिम चरणों में वह संवेगों पर नियन्त्रण करना सीख जाता है।

3. किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Adolescence)

- किशोरावस्था में प्रवेश करने पर किशोर/किशोरी से अनुशासित जीवन व्यतीत करने की आशा की जाती है, पर परिणाम ठीक इसके विपरीत होता है। हम उन्हें न तो बालकों की कोटि में रखते हैं न बड़ों की कोटि में। इस अवस्था में सबसे अधिक संवेगात्मक अस्थिरता पाई जाती है।

- किशोर/किशोरी में प्रेम, दया, क्रोध, सहानुभूति आदि संवेग स्थायी रूप धारण कर लेते हैं। वह इन पर नियन्त्रण नहीं रख पाता। अतः सामान्यतः अन्यायी व्यक्ति के प्रति क्रोध व दुःखी व्यक्ति के प्रति दया की अभिव्यक्ति करता है।
- किशोर/किशोरी की शारीरिक शक्ति की उनके संवेगों पर छाप होती है। जैसे—सबल व स्वस्थ किशोर में संवेगात्मक स्थिरता व निर्बल व अस्वस्थ किशोर में संवेगात्मक अस्थिरता पाई जाती है।
- किशोर/किशोरी अनेकों बातों के बारे में चिन्तित रहते हैं। उदाहरणार्थ—अपनी आकृति, स्वास्थ्य, सम्मान, धन प्राप्ति, शैक्षिक प्रगति, सामाजिक सफलता आदि।
- किशोर न तो बालक समझा जाता है न प्रौढ़। अतः उसे अपने संवेगात्मक जीवन में वातावरण से अनुकूलन में बहुत कठिनाई होती है। यदि वह अपने प्रयास में असफल रहता है, तो उसे घोर निराशा होती है। ऐसी स्थिति में वो कभी-कभी घर से भाग जाता है या आत्महत्या तक का शिकार हो जाता है।
- किशोरावस्था में असाधारण रूप से शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं। किशोर और किशोरी दोनों में काम प्रवृत्ति इतनी तीव्र होती है जो कि उसके संवेगात्मक व्यवहार पर बहुत अधिक प्रभाव डालती है।

भाषा विकास (Language Development)

भाषा एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा कोई भी व्यक्ति अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सकता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है इस नाते उसे निरन्तर अपने विचारों को दूसरों के सामने अभिव्यक्त करने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है अतः भाषा और विचारों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का एक सुन्दर और सुगम माध्यम है। एक गूंगा व्यक्ति दूसरों के सामने स्वयं को कितना असहाय महसूस करता है जब वह अपने विचारों को भाषा के माध्यम से प्रकट नहीं कर पाता है। यद्यपि वह अपने हाव-भाव तथा अंग संचालन द्वारा अपनी बात को कहने का प्रयास करता है किन्तु उसमें इतनी स्पष्टता नहीं होती है। अतः भाषा के माध्यम से विचारों को प्रकट करने पर उनमें स्पष्टता आ जाती है। अतः प्रत्येक बालक के विकास क्रम में भाषा विकास होना परम आवश्यक है। भाषा विकास बालकों के मानसिक और सामाजिक विकास में सहायता प्रदान करता है। भाषा के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान करने से व्यक्ति की सामाजिकता का विकास होता है। इसी प्रकार पढ़ने, लिखने, सीखने आदि सभी क्रियाओं में भी भाषा विकास माध्यम का कार्य करता है। भाषा विकास के कारण ही मानव दूसरे जीवों से श्रेष्ठ माना जाता है। मानव की सभ्यता व संस्कृति का विकास भी भाषा की ही देन है।

1. **शैशवावस्था में भाषा विकास (Language Development in Infancy)**

   शिशु का प्रथम क्रन्दन उसकी भाषा विकास की शुरुआत होती है। इस समय उसे स्वर और व्यंजनों का ज्ञान नहीं होता है। लगभग उसे चार माह तक शिशु जो ध्वनियाँ निकालता है उनमें स्वरों की संख्या अधिक होती है। लगभग 10 माह की अवस्था में शिशु एक शब्द का उच्चारण करता है और उसी शब्द की पुनरावृत्ति बार-बार करता है। लगभग 1 वर्ष तक शिशु की भाषा अस्पष्ट होती है केवल उसके माता-पिता ही अनुमान स्वरूप उसके शब्दोच्चारण का अर्थ निकाल सकते हैं। लगभग 1½ वर्ष की आयु में उसकी कुछ-कुछ भाषा समझ में आने लगती है।

   शैशवावस्था में बालक की वाक्य रचना केवल एक शब्द की होती है; जैसे—दूध के लिए वह बू-बू शब्द का उच्चारण करता है। इसी प्रकार वे अन्य वस्तुओं के लिए भी एक ही शब्द का प्रयोग करते हैं।

2. **बाल्यावस्था में भाषा विकास (Language Development in Childhood)**

   जैसे-जैसे बालक की आयु में वृद्धि होती है वैसे-वैसे उसके स्वरयन्त्र तथा स्नायुविक अंगों में परिपक्वता आती जाती है फलस्वरूप धीरे-धीरे उसका भाषा विकास तीव्र गति से होने लगता है। बाल्यावस्था में बालक शब्द से लेकर वाक्य निर्माण की क्रिया में दक्षता प्राप्त कर लेता है।

   बाल मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बाल्यावस्था में भी बालिकाओं का भाषा विकास बालकों की तुलना में तीव्र गति से होता है तथा लड़कों की अपेक्षा उनके वाक्यों में शब्दों की संख्या अधिक होती है। इसके अतिरिक्त भाषा प्रस्तुतीकरण में भी बालिकायें बालकों से तेज होती हैं। प्रथम छः वर्षों तक यह गति तीव्र रहती है फिर मन्द हो जाती है।

   बाल्यावस्था में भाषा विकास पर घर, विद्यालय, समूह के साथी, परिवार की सामाजिक व आर्थिक स्थिति तथा उचित निर्देश का प्रभाव पड़ता है।

3. **किशोरावस्था में भाषा विकास (Language Development in Adolescence)**

   भाषा विकास की दृष्टि से भी किशोरावस्था अति महत्वपूर्ण मानी जाती है। इस समय वह अपने वयस्कों द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुसार ही भाषा का प्रयोग करता है। उसकी भाषा में सूक्ष्मता और बौद्धिकता की झलक मिलती है। इस समय उसकी भाषा का स्वरूप स्व-निर्धारित होता है। उसके शब्दों में भावों की गहनता तथा शब्दों की जटिलता होती है। उच्चारण में शुद्धता आ जाती है और व्याकरण का प्रयोग सन्तोषजनक होता है।

   इसके अतिरिक्त किशोरावस्था में जो संवेगों की बहुलता होती है। इससे भी भाषा विकास प्रभावित होता है। कल्पना शक्ति का बाहुल्य होने के कारण इसी अवस्था में वे कवि, कहानीकार, चित्रकार, नाटककार, अभिनेता, विचारक आदि बनने की सोचते हैं। जिसमें भिन्न-भिन्न रूपों में उनकी भाषा का परिष्कृत रूप प्रकट होता है। विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण होने पर उनकी भाषा में सौन्दर्य माधुर्य झलकता है।

   इस समय उनका शब्द भण्डार विस्तृत हो जाता है। निश्चित भाषा शैली का विकास होता है। भाषा में प्रौढ़ता होती है।

   किशोरों का भाषा विकास उनके सामाजिक समायोजन में सहायता प्रदान करता है। किशोर चिन्तनशील तथा संवेदनशील प्राणी होता है। वह अपने चिन्तन व संवेगों को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। भाषा के उचित प्रयोग से वह समूह के बीच अपना एक स्थान बना पाता है जिससे सामाजिक समायोजन में सहायता मिलती है।

भाषा विकास के चरण (Steps of Language Development)

बालकों का भाषा विकास एकाएक नहीं होता है। यह तो एक लम्बी और जटिल प्रक्रिया है जिसके कई सोपान हैं। वैसे जन्म के बाद प्रथम क्रन्दन को ही भाषा विकास की प्रारम्भिक अवस्था माना जाता है किन्तु इस समय उसे इस बात का ज्ञान नहीं होता है कि उसका क्रन्दन किस कारण से है। बालक का वास्तविक भाषा विकास तभी माना जाता है जब वह स्वयं द्वारा उच्चारित शब्दों का अर्थ समझ सके तथा शब्दों का व्यक्तियों तथा वस्तुओं से सम्बन्ध जोड़ सके। अतः बालकों के भाषा विकास की अवस्थाओं को पाँच भागों में बाँटा जाता है—

1. **बोलने की तैयारी** (Preparation for Speech)—भाषा विकास की प्रारम्भिक अवस्था ही "बोलने की तैयारी है" है। यह अवस्था जन्म के बाद से प्रारम्भ होकर 13 से 14 महीने तक रहती है। भाषा विकास की

इस प्रक्रिया के दौरान बालक क्रन्दन द्वारा, बलबलाहट द्वारा तथा हावभाव द्वारा अपनी वाणी को प्रकट करने का प्रयास करता है।

(i) क्रन्दन (Crying)—प्रत्येक सामान्य शिशु के जीवन का प्रारम्भ उसके क्रन्दन से होता है। मनोवैज्ञानिकों ने क्रन्दन को ही भाषा विकास का प्रारम्भिक स्वरूप माना है। बालकों की यह क्रिया एक सहज क्रिया है इसका बालक से कोई बौद्धिक या संवेगात्मक सम्बन्ध नहीं होता है। जन्म के बाद प्रथम क्रन्दन तो एक प्राकृतिक क्रिया है। जन्म के बाद प्रथम दो सप्ताह तक भी बालकों का रोना उद्देश्यहीन तथा अनियमित होता है किन्तु आयु वृद्धि के साथ-साथ शिशु का क्रन्दन उसकी आवश्यकताओं से जुड़ता जाता है। तीन-चार सप्ताह के शिशु के क्रन्दन से यह स्पष्ट होने लगता है कि या तो वह भूखा है, उसे कोई पीड़ा है, या उसके वस्त्र व बिस्तर गीला हो गया है।

शिशु क्रन्दन के कारण—जन्म के पश्चात् दो सप्ताह तक तो शिशु क्रन्दन की क्रिया निरर्थक होती है लेकिन दो सप्ताह बाद शिशु का क्रन्दन परिस्थितिजन्य हो जाता है। शिशु क्रन्दन के आन्तरिक व बाह्य कारण हो सकते हैं; जैसे—भूख, थकान, पीड़ा, गीले वस्त्र, तीव्र ध्वनियाँ, तीव्र प्रकाश, भय आदि। जैसे-जैसे बालक की आयु बढ़ती जाती है उनके रोने के कारणों में वृद्धि होती जाती है। तीन-चार माह का बालक अपने आसपास दूसरे व्यक्तियों की उपस्थिति को समझने लगता है। अतः उसका क्रन्दन दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए भी होने लगता है। चार-पाँच माह का शिशु अपरिचित व्यक्तियों को देखकर रोने लगता है। 6-7 माह के शिशु अपनी प्रिय वस्तु छीन लेने पर रोते हैं यदि उनकी क्रियाओं में बाधा उत्पन्न की जाती है तो भी रोने लगते हैं। 1 वर्ष का बालक भय, अपरिचित व्यक्ति व परिस्थिति, कसे वस्त्र, भूख-प्यास तथा पीड़ा की स्थिति में रोता है। वे बालक अन्य बालकों की तुलना में अधिक रोते हैं जो क्रन्दन को अपनी आवश्यकता पूर्ति का साधन समझते हैं।

शिशु क्रन्दन में शारीरिक स्थितियाँ—सभी बालकों का रोने का स्वरूप समान नहीं होता है कुछ बालक अधिक रोते हैं जबकि कुछ बालक कम। मनोवैज्ञानिकों का ऐसा मानना है कि जो गर्भवती मातायें गर्भावस्था में संवेगात्मक रूप से अस्थिर रहती हैं जन्म के पश्चात् उनके शिशुओं के क्रन्दन की प्रवृत्ति अधिक होती है। इसके विपरीत संवेगात्मक रूप से सन्तुलित गर्भवती माताओं के शिशु कम रोते हैं। रोते समय बालकों की आन्तरिक तथा बाह्य शारीरिक स्थितियों में परिवर्तन आ जाता है जो बच्चे जितनी अधिक तेजी से रोते हैं उनकी शारीरिक क्रियायें; जैसे—हाथ-पैर पटकना, शरीर को पलटना, उतनी ही तीव्र होती है इसके अतिरिक्त रोते समय चेहरा लाल हो जाता है, साँस की गति अनियमित तथा अनियन्त्रित हो जाती है। एक माह से अधिक आयु के शिशु की आँखों से आँसू भी निकलते हैं। आयु वृद्धि के साथ-साथ बालक के क्रन्दन में कमी आती जाती है।

शिशु क्रन्दन से लाभ व हानि—भाषा विकास क्रम में रोने का अपना महत्व है क्योंकि इसी से भाषा विकास प्रारम्भ होता है किन्तु रोने को आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम जब बालक बना लेता है तो वह उसके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है जो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कराने के लिए अधिक रोते हैं वे चिड़चिड़े व जिद्दी हो जाते हैं। फलस्वरूप अधिक रोने से उनका शरीर दुर्बल हो जाता है।

शिशु का सामान्य रोना स्वास्थ्य के लिए व्यायाम का कार्य करता है। रोने से शिशु की माँसपेशियों की वृद्धि होती है उनमें क्रियाशीलता आती है। इसके साथ ही रोने से शिशु के संवेगों का प्रकटीकरण होता है।

शिशु का अधिक रोना प्रत्येक अवस्था में स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अतः जब शिशु भाषा का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दे तो उसके रोने में कमी आ जानी चाहिए। बालक की रोने की आदत बन जाना अहितकर है। इससे शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक सभी प्रकार का विकास प्रभावित होता है अतः आयु वृद्धि के साथ-साथ बालक के क्रन्दन मे कमी आनी चाहिए। जब बालक पाँच वर्ष का हो जाये तो उसका अनावश्यक रोना बन्द हो जाना चाहिए।

(ii) बलबलाना (Babbling)—आयु वृद्धि के साथ-साथ बच्चों का रोना कम हो जाता है किन्तु उनके स्थान पर शिशु अस्पष्ट ध्वनियाँ निकालने लगता है जिसे 'बलबलाना' कहते हैं। बलबलाने से ही बालक में शब्दोच्चारण का विकास होता है। पहले माह मे अन्त से ही बालक कुछ सरल ध्वनियाँ निकालने लगता है। स्पष्ट बलबलाहट दो माह की आयु से प्रारम्भ हो जाती है और लगभग 1½ वर्ष की आयु तक चलती रहती है। बलबलाने से बालक का स्वरयन्त्र (larynx) परिपक्व होता है।

बलबलाने की प्रारम्भिक अवस्था में बालक एक ही ध्वनि की पुनरावृत्ति करता है। प्रारम्भ में बालक स्वरों को फिर बाद मे व्यंजनों को उच्चारित करता है। ध्वनियों का उच्चारण बालक अन्य लोगों द्वारा बोले गये शब्दों को सुनकर करता है। प्रारम्भ में जब वह स्वरों को दुहराता है तो उसे आनन्द की अनुभूति होती है; जैसे—वह प्रारम्भ में बा, भा, पा, ना आदि स्वरों को दुहराता है तो उन्हीं से बाद में बाबा, मामा, पापा, नाना आदि शब्दों का विकास होता है।

बलबलाने की क्रिया अनुकरण पर आधारित होती है। बालक अपने माता-पिता तथा आस-पास रहने वाले व्यक्तियों के द्वारा बोले गये शब्दों का निरन्तर अनुकरण करता रहता है और फिर स्वयं भी उन्हीं ध्वनियों को दोहराता है। धीरे-धीरे सम्बद्धता (conditioning) के आधार पर इन शब्दों का अर्थ भी समझने लगता है।

कुछ विद्वानों का मानना है कि बलबलाने की क्रिया बालक अनुकरण द्वारा नहीं करता वरन् इसलिए करता है कि उसके द्वारा उच्चारित ध्वनियाँ उसे प्रिय लगती हैं अतः वह खेल की तरह बलबलाने का कार्य करता है।

बालकों की बलबलाने की क्रिया का कोई तात्कालिक महत्व नहीं होता है किन्तु भाषा विकास में इसका दीर्घगामी परिणाम देखा जा सकता है। बलबलाने की क्रिया से शिशु का स्वरयन्त्र परिपक्व होता है। बलबलाने से ही शब्दोच्चारण को आधार मिलता है और धीरे-धीरे भाषा विकास होता है।

(iii) हावभाव (Gestures)—हावभाव से तात्पर्य है कि अपने विभिन्न शारीरिक अंगों के माध्यम से अपने विचारों को प्रदर्शित करना। बालक के भाषा विकास में हावभाव भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। बालकों द्वारा हावभाव का प्रदर्शन भाषा के पूरक के रूप में

किया जाता है। बच्चों में हावभाव की उत्पत्ति बलबलाने के साथ-साथ ही हो जाती है। बच्चा अपने हावभावों का प्रदर्शन, मुस्कराकर, हाथ फैलाकर, उँगली दिखाकर, मूक भाषा में व्यक्त करता है। अतः बच्चों के लिए हावभाव, विचारों की अभिव्यक्ति का एक सुगम साधन है जो शब्दों के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता है।

हावभाव का प्रदर्शन बड़े बालकों द्वारा भी किया जाता है किन्तु बच्चों और बालकों के हावभाव के प्रदर्शन में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। बच्चों का प्रदर्शन मूक होता है जबकि बालकों का प्रदर्शन शब्दों के उच्चारण के साथ उनके अनुसार होता है। जैसे-जैसे बालक का भाषा विकास होता जाता है हाव-भाव का प्रदर्शन कम हो जाता है।

शिशु के जीवन में हावभाव महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि हावभाव के अभाव में शिशु अपनी आवश्यकताओं का ज्ञान वयस्कों को नहीं करा सकता है। भाषा विकास के साथ हावभावों में कमी आ जाती है किन्तु ये पूर्णतः समाप्त नहीं होते हैं।

2. **आकलन शक्ति का विकास** (Development of Comprehension)—बालकों की वह क्षमता जिसके द्वारा वह दूसरों की क्रियाओं तथा हावभाव का अनुकरण कर लेता है 'आकलन शक्ति' कहलाती है। **हरलॉक** के मतानुसार बालकों में आकलन शक्ति का विकास शब्दों के प्रयोग से पहले प्रारम्भ हो जाता है वह शब्दों को समझना पहले सीखता है और बोलना बाद में।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार शिशुओं में तीन चार माह की आयु से आकलन शक्ति का विकास प्रारम्भ हो जाता है। चार माह का शिशु माँ को पहचानकर मुस्कराने लगता है। 7-8 माह का बालक शब्दों का अनुसारण करने लगता है और एक वर्ष का बालक सरल निर्देशों को समझने लगता है। पाँच वर्ष की अवस्था में आकलन शक्ति का पर्याप्त विकास हो जाता है।

बालकों की आकलन शक्ति में शब्दों के साथ-साथ हावभाव भी होते हैं। बालक उन वाक्यों और शब्दों को जल्दी शीघ्रता से सीखता है जिनके साथ हावभाव भी सम्मिलित रहते हैं।

बालक के बौद्धिक विकास तथा आकलन शक्ति का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। तीव्र बुद्धि बालकों की आकलन शक्ति अधिक होती है।

3. **शब्द प्रयोग** (Vocabulary)—आयु वृद्धि और आकलन शक्ति के विकास से बालक का शब्द भण्डार बढ़ता है। प्रारम्भ में वह संज्ञाओं (nouns) का प्रयोग करता है। दो वर्ष का बालक लगभग 50% संज्ञा शब्द बोल लेता है। दो संज्ञा शब्द खिलौनों, खाने-पीने की चीजों, वस्त्रों और व्यक्तियों से सम्बन्धित होते हैं। सबसे पहले बालक साधारण क्रिया सूचक शब्दों; जैसे—आओ, जाओ, खाओ, लो, दो का प्रयोग करता है। शिशु केवल इन शब्दों का प्रयोग ही नहीं करता अपितु उनका अर्थ भी समझता है। डेढ़ वर्ष की अवस्था में वह विशेषण शब्दों (adjectives) का प्रयोग भी करने लगते है। ये विशेषण शब्द भोज्य पदार्थों और खिलौनों से सम्बन्धित होते हैं। प्रारम्भ में बालकों द्वारा अच्छा, बुरा, गरम, ठंडा आदि विशेषण शब्दों का प्रयोग किया जाता है। सर्वनाम शब्दों का प्रयोग बालक तीन वर्ष की अवस्था में करने लगता है। प्रारम्भ में मैं, मेरा, तू, तेरा, यह, वह, तुम, तुझे, उसका, उसे आदि सर्वनामों का प्रयोग किया जाता है किन्तु प्रारम्भ में उसे यह ज्ञान नहीं होता है कि उसे कौन-सा शब्द कब बोलना चाहिए। अन्य प्रकार के शब्दों का प्रयोग वह पाँच-छः वर्ष की अवस्था में करता है।

बालक की शब्दावली के विकास के साथ-साथ उसके शब्द भण्डार में भी वृद्धि होती है। 1 वर्ष की आयु में बालक की शब्दावली में केवल कुछ शब्द रहते हैं। इसके बाद शब्द भण्डार में तीव्र गति से वृद्धि होती है। शब्द भण्डार की वृद्धि के दौरान वह केवल नये शब्द ही नहीं सीखता बल्कि पहले सीखे गये शब्दों का नया अर्थ भी सीखता है। बालक द्वारा बोले गये प्रथम शब्द 'होलोफ्रेसस' (holophrases) कहलाते हैं क्योंकि एक शब्द में बालक का सम्पूर्ण आशय निहित होता है।

स्मिथ, शर्ली, गैसेल तथा थम्पसन आदि वैज्ञानिकों ने बालकों के शब्द भण्डार तथा शब्द चयन के लिए अध्ययन किये और बताया कि डेढ़ वर्ष के बालक का शब्द भण्डार 10 शब्द, दो वर्ष के बालक का शब्द भण्डार 272 शब्द, ढाई वर्ष में 450 शब्द, तीन वर्ष की अवस्था में 900 शब्द तथा चार वर्ष की अवस्था में 1500 शब्दों का हो जाता है। पाँच वर्ष में यह बढ़कर 2000 तथा छः वर्ष में लगभग 2500 हो जाता है। इस प्रकार दिन-प्रतिदिन उसका शब्द भण्डार बढ़ता जाता है। अध्ययनों में यह भी देखा है कि बालिकाओं का शब्द भण्डार सभी अवस्थाओं में बालकों की अपेक्षा अधिक रहता है।

बालकों के शब्द भण्डार के रूप—बालकों का शब्द भण्डार दो प्रकार का माना गया है—

(i) सामान्य शब्द भण्डार (General Vocabulary)—बालक सामान्य परिस्थितियों में जिन शब्दों का प्रयोग करता है वे उसके सामान्य शब्द कहलाते हैं। ये शब्द संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया सम्बन्धी होते हैं; जैसे—लेना, देना, आना, जाना, अच्छा, बुरा, मामा, नाना, पापा आदि।

(ii) विशिष्ट शब्द भण्डार (Special Vocabulary)—विशिष्ट शब्द भण्डार के अन्तर्गत वे शब्द आते हैं जिन्हें बालक विशेष अवसरों पर बोलता है। अधिकांशतः तीन चार वर्ष की आयु में बालक विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करने लगता है। पाँच-छः वर्षों में विशिष्ट शब्दावली का काफी मात्रा में विकास हो जाता है। बालकों की विशिष्ट शब्दावली अनेक रूपों में प्रकट होती है।

- **शिष्टाचार के शब्द** (Etiquette Vocabulary)—जैसे—आप, जी, श्रीमान, साहब, महाशय, कृपया, धन्यवाद आदि। इन शब्दों को बालक स्कूल जाने पर अधिक मात्रा में सीखता है। इन शब्दों द्वारा बड़ों के प्रति आदर प्रदर्शित करता है।
- **संख्यात्मक शब्द** (Number Vocabulary)—जैसे—गिनती, पहाड़े आदि।
- **रंगों से सम्बन्धित शब्द** (Colour Vocabulary)—जैसे—लाल, हरा, नीला, पीला आदि। चार वर्ष की आयु तक बालक तीन प्राथमिक रंगों—लाल, पीला, नीला उच्चारित करने लगता है।
- **समय सम्बन्धी शब्द** (Time Vocabulary)—जैसे—सुबह, शाम, रात, आज, कल, परसों, दिन, वर्ष, माह आदि।
- **धन से सम्बन्धित शब्द** (Money Vocabulary)—विभिन्न सिक्कों से सम्बन्धित शब्दों का उच्चारण बालक पाँच वर्ष की अवस्था तक सीख जाता है।
- **अशिष्ट शब्द** (Slong Vocabulary)—जैसे—गाली-गलौज के गंदे शब्दों का उच्चारण करना बालक पाँच से आठ वर्ष की अवस्था में सीख जाता है। संवेगात्मक तनाव व अस्थिरता की अवस्था में बालक अशिष्ट शब्दों का उच्चारण करता है।

4. **वाक्य निर्माण** (Sentence Formation)—वाक्य निर्माण भाषा विकास की महत्वपूर्ण अवस्था है क्योंकि वाक्यों के द्वारा बालक अपने विचारों को स्पष्ट रूप से व्यक्त कर सकता है। वाक्य निर्माण की प्रारम्भिक अवस्था में बालक केवल एक शब्दीय वाक्य बोलता है। यह शब्द या तो संज्ञा या फिर क्रिया होता है। उदाहरण के लिए यदि बालक पापा शब्द का प्रयोग करता है तो उसका अर्थ है—वह पापा के पास जाना चाहता है। इसी प्रकार यदि वह दूध की बोतल देखकर कहता है दे दो, इसका तात्पर्य है—वह दूध पीना चाहता है। ऐसे शब्द बालक एक से डेढ़ वर्ष की अवस्था के बीच अधिक बोलता है। एक शब्दीय वाक्यों के साथ बालक हावभावों का भी प्रदर्शन करता है; जैसे—दूध की बोतल की ओर उँगली करके कहता है दे दो।

   तीन-चार वर्ष की अवस्था में बालकों के वाक्यों में शब्दों की संख्या बढ़ जाती है। **मैकार्थी** (McCarthy) के अनुसार तीन वर्ष का बालक, तीन और चार वर्ष का बालक चार या पाँच शब्दों का प्रयोग अपने वाक्यों में करता है। ऐसे वाक्यों में संज्ञाओं, क्रियाओं और विश्लेषणों का मिश्रण होता है। इस अवस्था को 'अपूर्ण वाक्य की अवस्था' या 'लघु वाक्य की अवस्था' कहा जाता है। जैसे—बालक कहता है पापा ऑफिस गये, मैंने दूध पिया आदि। इसी प्रकार विकास क्रम में पाँच-छः वर्ष का बालक 10 शब्दों तक का प्रयोग अपने वाक्यों में कर लेता है।

   बालकों के वाक्य निर्माण में यह देखा गया है कि पहले बालक साधारण वाक्यों (simple sentence) को बोलते हैं। मिश्रित और संयुक्त वाक्यों का प्रयोग पाँच-छः वर्ष की अवस्था में कर पाते हैं।

5. **शुद्ध उच्चारण** (Correct Pronunciation)—शुद्ध उच्चारण भाषा विकास की अन्तिम अवस्था है। इसमें बालक अपने व्याकरण सम्बन्धी दोषों को सुधारता है और उच्चारण शुद्ध करता है। तीन वर्ष की आयु तक बालक की भाषा में बहुत अधिक व्याकरण सम्बन्धी दोष पाये जाते हैं। विशेषकर बच्चे सर्वनाम शब्दों के प्रयोग, वर्तमान, भूतकाल तथा भविष्यकाल के प्रयोग में त्रुटि करते हैं। इसके अतिरिक्त उनके संज्ञाओं के लिंग तथा वचन के प्रयोग में भी त्रुटि होती है। अतः यह आवश्यक है कि ठीक समय पर ही इन त्रुटियों का सुधार कर दिया जाये अन्यथा वे गलत शब्दों का उच्चारण करने लगते हैं। बच्चे व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियाँ भी अपनी भाषा में करते हैं किन्तु इस त्रुटि का निवारण धीरे-धीरे स्कूल जाने पर हो जाता है। कुछ बालक शब्दोच्चारण में भी त्रुटि करते हैं जैसे श को स बोलते हैं। इसका कारण घर में माता-पिता तथा अन्य व्यक्तियों का गलत शब्दोच्चारण करना होता है। कभी-कभी स्वरयन्त्र में खराबी होने से भी शब्दों का उच्चारण सही नहीं हो पाता है। छः-सात वर्ष की अवस्था में स्वरयन्त्र भी पूर्ण परिपक्व हो जाता है तथा बालक में अनुकरण की प्रवृत्ति भी इतनी अधिक विकसित हो जाती है कि वह शुद्ध उच्चारण द्वारा सुन्दर और शुद्ध भाषा का विकास कर सकता है।

संज्ञानात्मक विकास
(Cognitive Development)

संज्ञानात्मक विकास का पहला सम्बन्ध उन तरीकों से होता है जिनसे बालक की आन्तरिक मानसिक शक्तियाँ अर्जित, विकसित और अवसर के अनुसार प्रयुक्त होती हैं; जैसे—समस्या समाधान, स्मृति और भाषा। शैशवावस्था में सीखने, याद करने और सूचनाओं को प्रतीक के रूप में प्रयुक्त करने की क्षमता बहुत सामान्य स्तर पर होती है, वे छोटे-छोटे संज्ञानात्मक कार्य करने में सफल होते हैं; जैसे—सजीव और निर्जीव में अन्तर करना, कुछ वस्तुओं को पहचानना आदि। बाल्यावस्था के दौरान अधिगम और सूचना सम्बद्ध कार्य की गति तीव्र हो जाती है, याद रखने की अवधि बढ़ती है, संकेतों को प्रयुक्त करने की क्षमता का विकास होता है। किशोरावस्था की ओर बढ़ते बालक सूक्ष्म चिन्तन की ओर भी बढ़ने लगते हैं। अनुभव और अधिगम संज्ञानात्मक विकास में सहायक होते हैं। संज्ञानात्मक विकास से तात्पर्य बालकों में किसी संवेदी सूचनाओं को ग्रहण करके उस पर चिन्तन करने तथा क्रमिक रूप से उसे इस लायक बना देने से होता है जिसका प्रयोग विभिन्न परिस्थितियों में समस्या-समाधान के लिए किया जा सके। इस प्रकार देखा जाय तो संज्ञानात्मक विकास मानसिक विकास से सम्बद्ध होता है, मानसिक विकास से अलग करके संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन नहीं किया जा सकता।

संज्ञानात्मक विकास के सम्बन्ध में जीन पियाजे (Jean Piaget) का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। अपने अध्ययनों के आधार पर पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त प्रतिपादित किया, जो शिक्षा और शिक्षकों के लिए मील का पत्थर बना।

संज्ञानात्मक विकास को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक हैं, जिनमें से कुछ पीढ़ी दर पीढ़ी (genetic) चलते हैं और कुछ वातावरणीय व जैविक कारक भी मानसिक व संज्ञानात्मक विकास को प्रभावित करते हैं।

क्रो व **क्रो** के अनुसार—"विभिन्न कारक मानसिक विकास को प्रभावित करते हैं। वंशागत नाड़ी-मण्डल की रचना सम्भावित विकास की गति और सीमा को निश्चित करती है। कुछ अन्य भौतिक दशाएँ या व्यक्तिगत और वातावरण सम्बन्धी कारक मानसिक प्रगति को तीव्र या मन्द कर सकते हैं।"

विभिन्न अवस्थाओं में संज्ञानात्मक विकास
(Cognitive Development in Different Stages)

1. **शैशवावस्था में संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development in Infancy)**

   शैशवावस्था में संज्ञानात्मक विकास ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से होता है। शिशु अपने आस-पास के वातावरण में जिन वस्तुओं को देखता है और जिन व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है उन्हें जानने का प्रयास करता है। धीरे-धीरे वह अपने आस-पास के वातावरण, व्यक्तियों तथा खिलौनों से परिचित हो जाता है। चूँकि इस अवस्था में मानसिक विकास की गति तीव्र होती है।

   शैशवावस्था में संज्ञानात्मक विकास पर कई बातों का प्रभाव पड़ता है—

   (i) बच्चे के पालन-पोषण का तरीका
   (ii) आस-पास का पर्यावरण
   (iii) परिवेश की सामाजिक व मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ आदि।

2. **बाल्यावस्था में संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development in Childhood)**

   बाल्यावस्था में संज्ञानात्मक विकास की गति अति तीव्र होती है। बालक की मानसिक क्रियाओं में परिपक्वता दिखाई पड़ती है।

   (i) छठवाँ वर्ष—बालक की बुद्धि एवं मानसिक शक्तियों का पर्याप्त विकास हो जाता है। वह सार्थक प्रश्नों का सही उत्तर देने लगता है। उसमें स्मरण शक्ति एवं कल्पना शक्ति का पर्याप्त विकास हो जाता है तथा भाषा का कुशलतापूर्वक प्रयोग करने लगता है।

   (ii) सातवाँ वर्ष—बालक छोटी-छोटी घटनाओं का वर्णन कर लेता है। वस्तुओं में समानताएँ और अंतर बताता है। संदेश ला एवं ले जा सकता है।

   (iii) आठवाँ वर्ष—आठवें वर्ष में बालक छोटी-छोटी सामान्य समस्याओं को हल करने की क्षमता विकसित कर लेता है। कहानियाँ, कविताएँ याद कर लेता है।

(iv) **नवाँ वर्ष**—बालक समय, दिन, तारीख, वर्ष आदि बताने लगता है। उसे सिक्कों का ज्ञान हो जाता है। बालक को रुपए-पैसे गिनना, जोड़ना-घटाना, समय, दिन, तारीख महीना व वर्ष आदि का ज्ञान हो जाता है।

(v) **दसवाँ वर्ष**—बालक द्रुत गति से बोलने लगता है। 3-4 मिनट में 60-70 शब्द कह सकता है। दैनिक जीवन के नियमित कार्यों को स्वयं करने में सफल हो जाता है। वह सही ढंग से निरीक्षण और तार्किक चिन्तन करने लगता है।

(vi) **ग्यारहवाँ वर्ष**—लगभग 6 अंक आगे की ओर लगभग 4 अंक पीछे की ओर उल्टी गिनती तथा पुनरावृत्ति कर सकता है। साधारण गद्यांश पढ़कर उसका सारांश बता सकता है। छोटी-छोटी वस्तुओं तथा घटनाओं की तुलना कर सकता है। किसी घटना का कारण बता सकता है।

(vii) **बारहवाँ वर्ष**—बालक में तर्क और समस्या को हल करने की योग्यता का विकास हो जाता है। वह विभिन्न परिस्थितियों की वास्तविकता जानने का प्रयत्न करता है। कठिन शब्दों की व्याख्या करने तथा छोटी-छोटी बातों का कारण बताने की क्षमता का विकास हो जाता है। विवेक में वृद्धि हो जाती है जिससे वह दूसरे बालकों को सलाह भी देने लगता है। वह देखी हुई वस्तु या घटना के बारे में 75% तक बातें बता सकता है।

बाल्यावस्था के दौरान बालक-बालिकाओं की ज्ञानेन्द्रियाँ परिपक्व हो जाती हैं।

3. किशोरावस्था में संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development in Adolescence)

किशोरावस्था के दौरान किशोर एवं किशोरियों का संज्ञानात्मक विकास अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँचने लगता है। इस अवस्था में होने वाले मानसिक विकास से सम्बन्धित प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित ढंग से प्रस्तुत की जा सकती हैं—

(i) **बुद्धि का अधिकतम विकास** (Maximum Development of Intelligence)—किशोरावस्था में बुद्धि का विकास उच्चतम सीमा तक हो जाता है। विभिन्न मनोवैज्ञानिक बुद्धि के पूर्ण विकास के लिए अलग-अलग आयु सीमा मानते हैं। कुछ मानते हैं कि 16 वर्ष तक, कुछ का मानना है 18 वर्ष तक बुद्धि का पूर्णरूपेण विकास हो जाता है। मनोवैज्ञानिक वुडवर्थ 20 वर्ष की सीमा मानते हैं।

(ii) **उच्चतर मानसिक शक्तियों का विकास** (Development of Higher Mental Abilities)—इस अवस्था में उच्च मानसिक शक्तियों का पर्याप्त विकास हो जाता है। किशोरावस्था में मानसिक विकास बहुत से बौद्धिक क्षेत्रों को गतिशील और उन्नत बना देता है, जैसे—

- तथ्यों को सामान्यीकृत करने की योग्यता का विकास,
- सोचने-समझने की क्षमता का विकास,
- परोक्ष चिन्तन की योग्यता का विकास,
- दीर्घकालीन स्मृति का विकास,
- भविष्य की आवश्यकताओं का अनुमान लगाने की क्षमता का विकास।

(iii) **रुचियों में विविधता** (Various Interest)—किशोरावस्था में रुचियों का विकास बहुत तीव्र गति से होता है। बालक और बालिकाओं में कुछ रुचियाँ समान होती हैं तथा कुछ भिन्न होती हैं। जिन रुचियों में समानता होती है, वे हैं भावी जीवन एवं व्यवसाय में रुचि, फिल्मी, गीत सुनना, फिल्म देखना आदि। इसके अतिरिक्त बालकों में खेल, व्यायाम में अधिक रुचि दिखाई पड़ती है जबकि किशोरियों में संगीत, नृत्य व साहित्य आदि में अधिक रुचि होती है। शारीरिक स्वास्थ्य तथा आकर्षण, पौष्टिक भोजन, वेशभूषा तथा पढ़ाई-लिखाई में भी किशोर-किशोरियों की विशेष रुचि होती है।

(iv) **भाषा** (Language)—किशोरावस्था में भाषा ज्ञान तीव्रता से बढ़ता है। उसके पास शब्दों का विशाल भण्डार हो जाता है, जिसके माध्यम से वह किसी से भी, किसी भी विषय पर या कहीं पर भी तर्क, विचार, बहस करता है। किशोर यह भी समझने लगता है किससे, किस तरह की भाषा में बातचीत करना चाहिए। औपचारिक तथा अनौपचारिक स्थितियों में भी वह भाषा के प्रयोग में सतर्कता बरतने लगता है।

सामाजिक विकास
(Social Development)

उस प्रक्रिया को सामाजिक विकास की प्रक्रिया माना जाता है जिसके द्वारा वह सामाजिक परम्पराओं और रूढ़ियों के अनुसार व्यवहार करता है तथा अन्य लोगों से सहयोग करना सीखता है। दूसरे शब्दों में सामाजिक विकास का अर्थ है—बालक का समाजीकरण करना। समाज में रहकर ही वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है और अपनी जन्मजात शक्तियों और प्रवृत्तियों का विकास करता है। उसकी समस्त शक्तियों का विकास तथा आचरण-व्यवहार का परिमार्जन और सामाजिक गुणों का विकास सामाजिक वातावरण में ही सम्भव है। समाज में रहकर ही दूसरों से सम्पर्क स्थापित करता है और धीरे-धीरे सामाजिक आदर्शों तथा प्रतिमानों का अनुकरण करना सीखता है। इस प्रकार सीखने और समायोजन करने की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। सामाजिकता के विकास से बालक में समायोजन की क्षमता उत्पन्न होती है। व्यक्ति सामाजिक प्राणी है और शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति अपने समाज की जीवनशैली को सीखता है। समाज के मूल्यों और विश्वासों में आस्था रखने लगता है। अपने समाज में अनुकूलन स्थापित करने की योग्यता को सामाजिक विकास कहते हैं।

सामाजिक विकास के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने अपनी अलग-अलग परिभाषायें दी हैं जो निम्नानुसार हैं—

आई. एल. चाइल्ड के अनुसार—"सामाजिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति को अपने समूह के मानकों के अनुसार वास्तविक व्यवहारों का विकास करना पड़ता है।"

"Social development is the process by which a individual is led to develop actual behaviour according to the standards of his group."

—**I. L. Child**

ई. बी. हरलॉक के अनुसार—"सामाजिक विकास से तात्पर्य उस योग्यता को अर्जित करना है जिससे प्रजाति की आकांक्षाओं के अनुरूप व्यवहार किया जा सके।"

"Social development means acquisition of the ability to behave in accordance with social expectations." —**E.B. Hurlock**

विभिन्न अवस्थाओं में सामाजिक विकास
(Social Development in Different Stages)

सामाजिक विकास एक क्रमिक प्रक्रिया है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में यह भिन्न-भिन्न गति से चलता रहता है। जन्म के बाद शैशवावस्था से ही सामाजिक विकास की शुरुआत हो जाती है जब वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपने आस-पास रहने वाले व्यक्तियों के प्रति प्रतिक्रियायें करने लगता है किन्तु बचपनावस्था और बाल्यावस्था में सामाजिक विकास में

परिपक्वता आ जाती है जिससे प्रौढ़ावस्था में व्यक्ति अपने परिवार के सदस्यों के लिए सामाजिक आचरणों और व्यवहारों के लिए निर्देशित करता है। इस प्रकार सामाजिक विकास जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में पृथक्-पृथक् गति से होता है और जीवनपर्यन्त तक चलता रहता है।

1. **शैशवावस्था में सामाजिक विकास (Social Development in Infancy)**

   शिशु जन्म से सामाजिक नहीं होता। जन्म के बाद अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के प्रति प्रतिक्रिया करता है। इस प्रकार सामाजिक प्रक्रिया प्रथम सम्पर्क में प्रारम्भ होकर जीवनपर्यन्त चलती है।

   तृतीय वर्ष तक बालक आत्मकेन्द्रित रहता है। वह अपने लिए ही कार्य करता है, अन्य किसी के लिए नहीं। दो या अधिक बालकों के बीच उसमें सामाजिकता का भाव विकसित होता है। इस प्रकार चतुर्थ वर्ष के समाप्त होने तक बालक बहिर्मुखी व्यक्तित्व को धारण करना प्रारम्भ कर देता है। शैशवावस्था के अन्तिम वर्षों में शिशु का व्यवहार बाह्य परिवेश की ओर केन्द्रित हो जाता है। शिशु मित्र बनाना, विचार विनिमय करना, अपने साथियों में समायोजन करना सीख जाते हैं।

2. **बाल्यावस्था में सामाजिक विकास (Social Development in Childhood)**

   शिशु का संसार परिवार व बालक का संसार परिवार के बाहर संगी-साथी व विद्यालय होता है।

   (i) बालक एवं बालिकाओं में सामाजिक जागरूकता, चेतना व समाज के प्रति रुझान होता है। वे समूह का सदस्य होने के नाते समाज या समूह के आदर्शों का पालन करते हैं।

   (ii) इस आयु के बच्चे बालक बालिकाएँ अपने समूह अलग-अलग बनाते हैं। उन्हें खेल अधिक प्रिय होते हैं। वे अपने समूह में नियमों का पालन करते हैं।

   (iii) इस अवस्था में बच्चे मित्र बनाने लगते हैं। वे अधिकतर कक्षा के सहपाठी को ही मित्र बनाते हैं।

   (iv) इस आयु में बच्चे आत्मनिर्भर होने का प्रयास करते हैं। वे घर से बाहर निकलकर अन्य बालकों के साथ समय बिताते हैं, कार्य करते हैं व निर्णय भी लेते हैं। उनमें आत्मसम्मान की मात्रा अधिक होती है।

3. **किशोरावस्था में सामाजिक विकास (Social Development in Adolescence)**

   किशोरावस्था मानव जीवन की अनोखी अवस्था होती है। उसके प्रति दूसरों के और दूसरों के प्रति उसके दृष्टिकोण न केवल उसके अनुभवों में, वरन् उसके सामाजिक सम्बन्धों में भी परिवर्तन लाने लगते हैं। इससे उसके सामाजिक विकास पर भी निम्न प्रभाव पड़ता है—

   (i) इस अवस्था में किशोर/किशोरी में आत्मप्रेम की भावना बहुत अधिक होती है। वे अपनी वेश-भूषा पर विशेष ध्यान देते हैं तथा स्वयं को आकर्षक बनाने में अधिक समय व्यतीत करते हैं।

   (ii) इस अवस्था में किशोर/किशोरी में विषम लिंगीय आकर्षण होने लगता है। वे एक-दूसरे के साथ समय बिताने के लिए उत्सुक रहते हैं।

   (iii) इस आयु में बच्चे अपने समूह के सक्रिय व प्रतिष्ठित सदस्य बन जाते हैं और वे समूह के लिए कुछ भी करने को तैयार रहते हैं।

   (iv) इस आयु में बच्चों में आत्मसम्मान की भावना बहुत अधिक होती है और वे अपने को बच्चा न मानकर वयस्क मानते हैं।

   (v) किशोर/किशोरी में संवेगों की तीव्र अभिव्यक्ति होती है। वे अपनी इच्छाओं को समाज के मापदण्ड के खिलाफ भी पूरा करना चाहते हैं। इसलिए उनके समायोजन में अस्थिरता आ जाती है।

नैतिक विकास
(Moral Development)

बालकों में नैतिकता का विकास सामाजिक अन्तर्क्रिया के परिणामस्वरूप होता है। बच्चे समाज के सम्पर्क में आने पर सामाजिक व्यवहारों का अधिगम करते हैं और इसी अवधि में उनमें नैतिकता का भी विकास होता रहता है। नैतिकता के विकास के कारण ही बच्चे सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप व्यवहार करना सीखते हैं तथा उनके व्यवहार में सामाजिक अनुरूपता प्रदर्शित होती है।

जोन्स (1954) के अनुसार, ''निश्चित समय या स्थान के आदर्शों के प्रति अनुरूपता का प्रदर्शन ही नैतिकता है।''

"Morality concerns itself with conformity to existing standards of a given time or place."

हरलॉक (1978, 1984) के अनुसार, ''सामाजिक समूहों की नैतिक संहिता के प्रति अनुरूपता ही नैतिकता है। इसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के मोर्स (Mores) से हुई है, जिसका तात्पर्य आचरण, प्रथाओं या लोकरीतियों से है।''

"Moral behaviour means behaviour in conformity with moral code of the social group. Moral comes from the Latin word 'mores', meaning manners, customs and folkways."

नैतिक विकास की अवस्थाएँ
(Stages in Moral Development)

अन्य विकासात्मक प्रक्रमों की भाँति नैतिक विकास की भी प्रक्रिया अनेक अवस्थाओं में पूरी होती है। यह सतत् चलने वाली प्रक्रिया है। इसमें अधिगम की विशेष भूमिका होती है—

1. **बचपनावस्था में नैतिकता (Morality in Babyhood)**

   प्रारम्भ में बच्चे न तो नैतिक और न ही अनैतिक होते है, बल्कि गैर-नैतिक (Nonmoral) होते हैं। उनमें न तो जन्मजात अच्छाइयाँ और न ही बुराइयाँ होती हैं। बच्चे को अच्छाई एवं बुराई में अन्तर सीखना पड़ता है। प्रारम्भ में वह अच्छाई या बुराई में अन्तर इस आधार पर सीखता है कि सम्बन्धित वस्तु या कार्य सुखद है या दु:खद। वे दूसरे की चिन्ता नहीं करते हैं। इस अवस्था में उसके कार्यो से दूसरों को कष्ट हो सकता है, परन्तु उसे कोई चिन्ता नहीं होती है। वह निर्देशों की अवहेलना भी कर सकता है।

2. **पूर्व-बाल्यावस्था में नैतिकता (Morality in Early Childhood)**

   बाल्यावस्था में नैतिकता की आधारशिला (नींव) पड़ती है। इस अवस्था (2-6 वर्ष) में बच्चों को यह बताया जाता है कि कैसा व्यवहार करना है। अनुकूल व्यवहार करके वह प्रशंसा या पुरस्कार प्राप्त करता है और अनुचित व्यवहार पर दण्ड का भागी होता है। विभिन्न अनुचित व्यवहारों के लिए प्राप्त होने वाले दण्डों की मात्रा (तीव्रता) के आधार पर वह यह भी अनुमान लगा सकता है कि उसका अपराध कितना बड़ा था। स्थिर अनुशासन द्वारा बच्चों में 5वें वर्ष तक आज्ञाकारी भावना विकसित की जानी चाहिए। इस अवस्था में बच्चे अज्ञानता के कारण प्राय: गलत कार्य कर जाते हैं, जिसे आगे चलकर छोड़ भी देते हैं। पुरस्कार एवं दण्ड द्वारा उचित-अनुचित का ज्ञान सरलता से कराया जा सकता है। वे छठवें वर्ष तक गलतियों के लिए अफसोस करना भी सीख लेते हैं।

3. उत्तर-बाल्यावस्था में नैतिकता (Morality in Late Childhood)

उत्तर-बाल्यावस्था में प्रवेश करते-करते बच्चे कई समूहों के सदस्य बन चुके होते हैं। इनमें स्कूल या क्लब प्रमुख हैं। यही कारण है कि इस अवस्था में नैतिकता के विकास में समूहों का विशेष योगदान होता है। छः वर्ष से लेकर बारह वर्ष के बीच बच्चे अपने समूहों के नियमों तथा आदर्शों का दृढ़ता से पालन करते हैं। इस अवस्था के बच्चों में सही या गलत की समझ आ चुकी होती है। विभिन्न परिस्थितियों से सम्बन्धित सम्प्रत्ययों का विकास भी हो चुका होता है। इन कारणों से उनका व्यवहार उन नियमों तथा आदतों से प्रभावित होता है जिनका अधिगम वे कर चुके हैं। इसका आशय है कि उनमें वास्तविक नैतिकता कुछ कम होती है अर्थात् वे विभिन्न कार्यों के लिए स्वयं को उत्तरदायी कम मानते हैं। उनमें न्याय एवं सम्मान की भावना आ जाती है। बच्चे इस अवधि में यह अनुभव करने लगते है कि झूठ बोलना, कायर होना और मित्रों को धोखा देना गलत है। उनमें सामाजिक जागरूकता बढ़ जाती है और उनके मित्र उनके लिए अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

4. किशोरावस्था में नैतिकता (Morality in Adolescence)

नैतिकता सम्बन्धी परिपक्वता भी किशोरावस्था में ही आती है। इस अवधि में सामाजिक वांछनीयता की भावना प्रबल हो जाती है। इससे नैतिक विकास की गति तीव्र हो जाती है। परन्तु यदि किन्हीं कारणों से किशोर गलत मार्ग का अनुसरण करने लगता है तो उसमें नैतिकता के स्थान पर अनैतिकता की प्रवृत्ति बढ़ने लगती है। अतः इस अवस्था में उस पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसी अवस्था में उच्च स्तरीय मूल्यों का विकास होता है और वह एक परिपक्व सामाजिक प्राणी बनता है।

क्रियात्मक विकास
(Motor Development)

क्रियात्मक विकास से तात्पर्य बालक के भीतर क्रियात्मक क्षमताओं (Motor Abilities) तथा क्रियात्मक कौशलों (Motor Skills) के विकास से है। इसके द्वारा बालक अपनी माँसपेशियों को नियन्त्रित करना सीख जाता है जिससे बालक अपनी क्रियाओं को धीरे-धीरे नियन्त्रित करने लगता है फलस्वरूप जन्म के बाद जो क्रियायें अनिश्चित तथा अनियन्त्रित होती हैं। वही धीरे-धीरे बालक के स्वयं के नियन्त्रण में आ जाती हैं। क्रियात्मक विकास को 'गत्यात्मक योग्यता का विकास' भी कहा जाता है।

क्रियात्मक विकास के स्वरूप तथा अर्थ को स्पष्ट करने के लिये अलग-अलग विद्वानों ने अपनी अलग-अलग परिभाषायें दी हैं। कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषायें अग्रलिखित हैं–

हरलॉक (Hurlock) के अनुसार–''क्रियात्मक विकास का तात्पर्य माँसपेशियों की उन गतिविधियों के नियन्त्रण से है जो जन्म के समय तथा जन्मोपरांत निरर्थक व अनिश्चित होती हैं।''

"Motor development consists of control of the movements of the muscles which at birth and shortly afterwards are random and meaningless."

—Hurlock E.B.

क्रो एण्ड **क्रो** (Crow and Crow) के अनुसार–''क्रियात्मक योग्यताओं से तात्पर्य उन विभिन्न प्रकार की शारीरिक गतियों से है जो कि नाड़ियों और माँसपेशियों के संयोजन द्वारा संभव है।''

"Motor abilities can be described briefly as various kinds of bodily movements that are made possible through the co-ordination of nerve and muscle activity." **—L.D. Crow & L. Crow.**

शैशवावस्था का क्रियात्मक विकास (Motor Development of Infancy)

गर्भकालीन अवस्था से ही शिशु का क्रियात्मक विकास प्रारम्भ हो जाता है और जन्म के बाद इनमें और अधिक विकास दिखायी देता है। नवजात शिशु की क्रियायें उद्देश्यपूर्ण व समन्वित (Co-ordinated) नहीं होती हैं क्योंकि अभी उसका स्नायु संस्थान परिपक्व नहीं होता है।

नवजात शिशु द्वारा की जाने वाली क्रियाओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है–

1. **सामान्य क्रियायें** (General or Mass Activities)–सामान्य क्रियाओं को समूहीकृत क्रियायें भी कहते हैं क्योंकि इन क्रियाओं में शिशु का कोई एक अंग ही क्रियाशील नहीं होता है बल्कि क्रिया की प्रतिक्रिया स्वरूप कई अंग क्रियाशील हो जाते हैं। अतः इन क्रियाओं में शिशु का सम्पूर्ण शरीर क्रियाशील हो जाता है। जैसे–यदि बालक के एक पैर के तलवे को गुदगुदाया जाता है तो वह केवल उसी पैर को नहीं हिलाता है अपितु दूसरे पैर को भी हिलाता है या दोनों टाँगों को झटकता है, करवट लेने की कोशिश करता है और रोता है। इस प्रकार एक ही क्रिया के उद्दीपन से सम्पूर्ण शरीर क्रियाशील हो जाता है। वैज्ञानिकों के मतानुसार जब सामान्य क्रिया समाप्त हो जाती है तो शिशु शीघ्रता से थक जाता है क्योंकि सम्पूर्ण शरीर के क्रियाशील होने से ऊर्जा व्यय अधिक होता है।
2. **विशिष्ट क्रियायें** (Specific Activity)–विशिष्ट क्रियायें वे क्रियायें हैं जिन्हें शिशु विशेष उद्दीपकों के प्रति एक निश्चित ढंग से करता है। इन क्रियाओं का स्वरूप समय, स्थान तथा उद्दीपक परिवर्तित करने पर बदलता नहीं है।

   विशिष्ट क्रियायें दो प्रकार की होती हैं–

   (अ) सहज क्रियायें (Reflexes)

   (ब) सामान्यीकृत अनुक्रियायें (Generalized Responses)

बचपनावस्था में क्रियात्मक विकास (Motor Development During Babyhood)

क्रियात्मक विकास 'विकासात्मक निर्देशन नियम' (Law of Development Direction) के अनुसार होता है। इस नियम के अनुसार क्रियात्मक विकास पहले सिर फिर धड़ तथा अंत में पैरों में होता है।

हरलॉक (Hurlock E.B.) ने बचपनावस्था में होने वाले क्रियात्मक विकास को चार भागों में बाँटा है–

1. **सिर के क्षेत्र में क्रियात्मक विकास** (Motor Developement in Head Region)–सिर के क्षेत्र में होने वाली प्रमुख क्रियाओं में (i) नेत्रगति, (ii) मुस्कराना, (iii) तथा सिर को ऊपर उठाने की क्रिया बचपनावस्था में पायी जाती है। विकास क्रम में इन क्रियाओं का विकास सबसे पहले प्रारम्भ होता है तथा इन क्रियाओं के विकास की गति भी तीव्र होती है।

   (i) नेत्र गति (Eye Movement)–जन्म के समय शिशु अपनी दृष्टि को कहीं भी टिका नहीं सकता है किन्तु **गैसेल** (Gesell) के अनुसार जन्म के पश्चात् बारह घंटों तक नेत्रों में किसी प्रकार की गति नहीं होती है। किन्तु बारह घंटे बाद शिशु के नेत्रों में गतिशील वस्तुओं के प्रति क्रिया प्रारम्भ हो जाती है और धीरे-धीरे लगभग 3 माह की अवस्था तक वह दृष्टि को पूर्णतया टिकाने में सफलता प्राप्त कर लेता है।

   (ii) मुस्कराना (Smiling)–मुस्कराना एक 'सहज क्रिया' है जो शिशु में जन्म के प्रथम सप्ताह में ही पायी जाती है। प्रारम्भ में यह क्रिया तब प्रकट होती है जब शिशु के किसी अंग को स्पर्श किया जाता है किन्तु 'सामाजिक मुस्कराहट' (Social smiling) (दूसरों के मुस्कराने

पर प्रतिक्रिया स्वरूप मुस्कराना) का प्रदर्शन शिशु तीन, चार माह का पूर्ण हो जाने पर ही करता है। सामाजिक मुस्कराहट से बच्चे के सामाजिक व्यवहारों की शुरुआत होती है।

(iii) सिर को ऊपर उठाना (Lifting up of Head)—जन्म के बाद सिर तथा गर्दन की माँसपेशियाँ अत्यन्त शिथिल होने के कारण शिशु का सिर इधर-उधर लुढ़क जाता है जिससे शिशु को उठाते समय हाथ का सहारा देना पड़ता है किन्तु धीरे-धीरे सिर तथा गर्दन की माँसपेशियों में सबलता आने से तीन माह का होते-होते शिशु अपने सिर को सँभालने लगता है। दो माह की आयु में यदि शिशु को पेट के बल लिटाया जाये तो वह अपने सिर को काफी ऊँचा उठा लेता है। पाँच माह का शिशु अपने सिर को किसी भी दिशा में आसानी से घुमा लेता है। पाँच-छः माह का गोद में बैठा हुआ बालक अपनी गर्दन को इधर-उधर घुमा सकता है। 6 माह का बालक बिना किसी सहारे के बैठकर अपने सिर को इधर-उधर घुमा सकता है।

2. **भुजाओं तथा हाथों में क्रियात्मक विकास** (Motor Development in Arms and Hands)—बचपनावस्था में भुजाओं तथा हाथों के क्षेत्र में जिन क्रियाओं का विकास होता है उनमें 'पकड़ने की क्रिया' (Prehension) प्रमुख है।

   'वस्तु पकड़ने की क्रिया' (Prehension) में बच्चा कई क्रियायें करता है—

   (i) सबसे पहले वह 'हाथ फैलाने' (Reaching) की क्रिया करता है। हाथ फैलाने की क्रिया में कम उम्र के बच्चे अपनी भुजा को सीधी नहीं रखते हैं अपितु झटके के साथ हाथ उठाते हैं। वस्तु पकड़ने की क्रिया में बालक पहले पूरी भुजा फिर कोहनी, कलाई और अन्त में उँगलियों का प्रयोग करता है।

   (ii) वस्तु पकड़ने की क्रिया में दूसरी क्रिया बालक 'वस्तु को छूने' (Touching) की करता है। यह क्रिया बच्चों में चार पाँच माह की आयु से ही दिखायी देने लगती है। एक वर्ष का पूर्ण होने तक यह क्षमता अच्छी तरह विकसित हो जाती है।

   (iii) तीसरी अवस्था वस्तुओं को पकड़ने की (Grasping) है। 7-8 माह की आयु में बालक दोनों हाथों में दो वस्तुओं को आसानी से पकड़ लेता है किन्तु हिलती-डुलती वस्तुओं को वह आसानी से नहीं पकड़ पाता है।

   (iv) वस्तु पकड़ने की अंतिम अवस्था 'मुट्ठी से पकड़ना' (Gripping) है। यह क्षमता 7-8 माह की आयु में प्रारम्भ हो जाती है।

3. **धड़ के क्षेत्र में क्रियात्मक विकास** (Motor Development in Trunk Region)—सिर के क्षेत्र में क्रियात्मक विकास हो जाने पर कंधों और धड़ की माँसपेशियों में परिपक्वता आने लगती है। बालक के धड़ के भाग में दो प्रकार की क्रियाओं का विकास होता है।

   (i) पलटना या लुढ़कना (Twinning of Rolling)

   (ii) बैठना (Sitting)

4. **पैरों में क्रियात्मक विकास** (Motor Development in the Legs)—पैरों के क्रियात्मक विकास के अन्तर्गत सर्वप्रथम चलना आता है। चलने की क्रिया के अतिरिक्त दौड़ना, उछलना, कूदना, सीढ़ियों पर चढ़ना आदि क्रियायें भी पैरों के क्रियात्मक विकास के अन्तर्गत आती हैं। बचपनावस्था में केवल बालक के चलने की क्रिया ही विकसित हो पाती है।

   बालकों की चलने की क्रिया का भी क्रमिक विकास होता है। इस क्रिया में कई क्रियायें सम्मिलित रहती हैं; जैसे—(1) लुढ़कना (Rolling), (2) झटके के साथ चलना (Hitching), (3) घिसकना (Crawling) तथा (4) रेंगना (Creeping) आदि।

बाल्यावस्था में क्रियात्मक विकास (Motor Development during Childhood)

बाल्यावस्था बचपनावस्था के बाद की अवस्था है। बचपनावस्था में जब बालक के हाथ, पैर, सिर तथा धड़ की माँसपेशियों में परिपक्वता आ जाती है तो वह अपने इन अंगों की क्रियाओं पर नियन्त्रण करना सीख जाता है तब उसके क्रियात्मक कौशलों (Motor Skills) का विकास होता है। अतः बचपनावस्था में जिन क्रियात्मक योग्यताओं का विकास होता है उन्हीं से सम्बन्धित क्रियात्मक कौशलों का विकास बाल्यावस्था में होता है। क्योंकि बचपनावस्था में माँसपेशियों पर नियन्त्रण पा लेने से बालक अब परिष्कृत क्रियायें करने लगता है। लगभग तीन से ग्यारह वर्ष की अवस्था में हाथ और पैर के विभिन्न कौशलों का विकास हो जाता है। कौशलों के विकास पर विभिन्न तत्वों; जैसे—परिपक्वता, सीखना, अभ्यास, सीखने के अवसर व सुविधायें, मानसिक क्षमता तथा माँसपेशियों के समन्वय का प्रभाव पड़ता है।

बाल विकास का अधिगम या सीखने से सम्बन्ध (Relationship of Child Development from Learning)

अधिगम या सीखने का अर्थ (Meaning of Learning)

'सीखना' किसी स्थिति के प्रति सक्रिय प्रतिक्रिया है। हम अपने हाथ में आम लिए चले जा रहे हैं। कहीं से एक भूखे बन्दर की उस पर नजर पड़ती है। वह आम को हमारे हाथ से छीन कर ले जाता है। यह भूखे होने की स्थिति में आम के प्रति बन्दर की प्रतिक्रिया है। पर यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक (Instinctive) है, सीखी हुई नहीं। इसके विपरीत, बालक हमारे हाथ में आम देखता है। वह उसे छीनता नहीं है, वरन् हाथ फैलाकर माँगता है। आम के प्रति बालक की यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक नहीं, सीखी हुई है। जन्म के कुछ समय बाद से ही उसे अपने वातावरण में कुछ-न-कुछ सीखने को मिल जाता है। पहली बार आग को देखकर वह उसे छू लेता है और जल जाता है। फलस्वरूप, उसे एक नया अनुभव होता है। अतः जब वह आग को फिर देखता है, तब उसके प्रति उसकी प्रतिक्रिया भिन्न होती है। अनुभव ने उसे आग को न छूना सिखा दिया है। अतः वह आग से दूर रहता है। इस प्रकार, "सीखना—अनुभव द्वारा व्यवहार में परिवर्तन है।"

हम 'सीखने' के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे हैं, यथा—

स्किनर के अनुसार—"सीखना, व्यवहार में उत्तरोत्तर सामंजस्य की प्रक्रिया है।"

"Learning is a process of progressive behaviour adaptation."

—**Skinner**

वुडवर्थ के अनुसार—"नवीन ज्ञान और नवीन प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करने की प्रक्रिया सीखने की प्रक्रिया है।"

"The process of acquiring new knowledge and new responses is the process of learning." —**Woodworth**

अधिगम या सीखने की विशेषताएँ (Characteristics of Learning)

योकम एवं **सिम्पसन** (Yoakam and Simpson) के अनुसार—सीखने की सामान्य विशेषताएँ निम्नांकित हैं—

1. **सीखना : सम्पूर्ण जीवन चलता है** (All Living is Learning)—सीखने की प्रक्रिया आजीवन चलती है। व्यक्ति अपने जन्म के समय से मृत्यु तक कुछ-न-कुछ सीखता रहता है।
2. **सीखना : परिवर्तन है** (Learning is Change)—व्यक्ति अपने और दूसरों के अनुभवों से सीखकर अपने व्यवहार, विचारों, इच्छाओं, भावनाओं आदि में परिवर्तन करता है।

3. **सीखना : सार्वभौमिक है** (Learning is Universal)—सीखने का गुण केवल मनुष्य में ही नहीं पाया जाता है। वस्तुतः संसार के सभी जीवधारी पशु-पक्षी और कीड़े-मकोड़े भी सीखते हैं।
4. **सीखना : विकास है** (Learning is Growth)—व्यक्ति अपनी दैनिक क्रियाओं और अनुभवों द्वारा कुछ-न-कुछ सीखता है। फलस्वरूप, उसका शारीरिक और मानसिक विकास होता है। सीखने की इस विशेषता को **पेस्टालॉजी** ने वृक्ष और **फ्रोबेल** ने उपवन का उदाहरण देकर स्पष्ट किया है।
5. **सीखना : अनुकूलन है** (Learning is Adjustment)—सीखना, वातावरण से अनुकूलन करने के लिए आवश्यक है। सीखकर ही व्यक्ति, नई परिस्थितियों से अपना अनुकूलन कर सकता है। जब वह अपने व्यवहार को इनके अनुकूल बना लेता है, तभी वह कुछ सीख पाता है।
6. **सीखना : नया कार्य करना है** (Learning is Doing Something New)—**वुडवर्थ** के अनुसार—सीखना कोई नया कार्य करना है। पर उसने उसमें एक शर्त लगा दी है। उसका कहना है कि सीखना, नया कार्य करना तभी है, जबकि यह कार्य फिर किया जाय और दूसरे कार्यों में प्रकट हो।
7. **सीखना : अनुभवों का संगठन है** (Learning is Organization of Experiences)—सीखना न तो नये अनुभव की प्राप्ति है और न पुराने अनुभवों का योग, वरन् नये और पुराने अनुभवों का संगठन है। जैसे-जैसे व्यक्ति नये अनुभवों द्वारा नई बातें सीखता जाता है, वैसे-वैसे वह अपनी आवश्यकताओं के अनुसार अपने अनुभवों को संगठित करता चला जाता है।
8. **सीखना : उद्देश्यपूर्ण है** (Learning is Purposive)—सीखना, उद्देश्यपूर्ण होता है। उद्देश्य जितना ही अधिक प्रबल होता है, सीखने की क्रिया उतनी ही अधिक तीव्र होती है। उद्देश्य के अभाव में सीखना असफल होता है। **मर्सेल** के अनुसार—"सीखने के लिए उत्तेजित और निर्देशित उद्देश्य की अति आवश्यकता है और ऐसे उद्देश्य के बिना सीखने में असफलता निश्चित है।"
9. **सीखना : विवेकपूर्ण है** (Learning is Intelligent)—**मर्सेल** का कथन है कि सीखना, यांत्रिक कार्य के बजाय विवेकपूर्ण कार्य है। उसी बात को शीघ्रता और सरलता से सीखा जा सकता है, जिसमें बुद्धि या विवेक का प्रयोग किया जाता है। बिना सोचे-समझे, किसी बात को सीखने में सफलता नहीं मिलती है। **मर्सेल** के शब्दों में—"सीखने की असफलताओं का कारण समझने की असफलताएँ हैं।"

   "Failures in learning are failure in understanding."

   —**Mursell** (p. 158)
10. **सीखना : सक्रिय है** (Learning is Active)—सक्रिय सीखना ही वास्तविक सीखना है। बालक तभी कुछ सीख सकता है, जब वह स्वयं सीखने की प्रक्रिया में भाग लेता है। यही कारण है कि डाल्टन प्लान, प्रोजेक्ट मेथड आदि शिक्षण की प्रगतिशील विधियाँ, बालक की क्रियाशीलता पर बल देती हैं।

अधिगम और विकास परस्पर एक-दूसरे के पूरक माने जाते हैं। अधिगम के बिना विकास असम्भव है। दोनों कारकों में अन्तर-सम्बन्धों का पाया जाना निश्चित है। इनमें कई प्रकार के अन्तर-सम्बन्ध पाये जाते हैं।

1. **अधिगम में विचरण** (Variation in Learning)—प्रत्येक मानव प्राणी में अधिगम की योग्यता होती है, परन्तु अधिगम की योग्यता हर व्यक्ति में एक जैसी नहीं पायी जाती है। इस पर वैयक्तिक भिन्नताओं का प्रभाव पड़ता है। इस कारण विभिन्न व्यक्तियों के अधिगम में विचरण या अन्तर प्राप्त हो सकता है। अधिगम क्षमता में अन्तर होने के कारण हर व्यक्ति से समान मात्रा में अधिगम नहीं कराया जा सकता है। लोगों के व्यक्तित्व, रुचि, अभिवृत्ति और व्यवहार के विभिन्न प्रतिमानों में अन्तर केवल परिपक्वता के ही कारण नहीं पाया जाता है, बल्कि विकास तथा अधिगम दोनों का परिणाम है। योग्यताएँ जन्मजात हैं। अधिगम की समान दशा में भी इस कारण अन्तर प्राप्त हो सकता है।
2. **विकास की सीमाएँ** (Limits of Development)—विकास की निश्चित सीमा होती है और उसी के अनुरूप प्रशिक्षण दिया जा सकता है। यदि अधिगम की व्यवस्था विकास के स्तर को ध्यान में रखकर की जाती है, तो अच्छे परिणाम की प्रत्याशा की जानी चाहिए, अन्यथा नहीं। विकास एवं अधिगम के पारस्परिक महत्त्व को स्पष्ट करते हुए **कैटेल** इत्यादि (1957) ने लिखा है कि हर प्रकार का अधिगम एवं समायोजन प्राणी में अन्तर्निहित गुणों द्वारा सीमित कर दिया जाता है। (All learning and adjustment is limited by inherent properties in the organism.)। **गेसेल** ने भी कहा है कि पर्यावरणीय कारक विकास में सहायता कर सकते है, उसमें तेजी ला सकते हैं, परिमार्जन कर सकते है, परन्तु विकास की शृंखला (Progression of development) नहीं उत्पन्न कर सकते हैं। **कारमाइकल** एवं **मैकग्रा** का विचार है कि परिपक्वता (M) एवं अधिगम (L) विकास (D) के दृष्टिकोण से एक-दूसरे के पूरक हैं। इनमें होने वाली अन्तर्क्रिया ही विकास को निर्धारित करती है, $D = f(M \times L)$ अर्थात् विकास के निर्धारक के रूप में दोनों ही कारक समान रूप में महत्त्वपूर्ण हैं।
3. **अधिगम की समय सारणी** (Time Table for Learning)—विकास तथा अधिगम के बीच तीसरा प्रमुख अन्तर-सम्बन्ध यह है कि इससे अधिगम के लिए समय सारणी उपलब्ध होती है। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति जब तक तत्पर नहीं है तब तक अधिगम नहीं होगा। विकासात्मक तत्परता या अधिगम के लिए तत्परता यह निश्चित करने में सहायक होती है कि कब अधिगम हो सकता है, कब अधिगम नहीं करना चाहिए। **हरलॉक** (1975) ने लिखा है, ''व्यक्ति यदि अधिगम के लिए तैयार या तत्पर है तो अधिगम हो सकता है, अन्यथा नहीं।''

   "The individual cannot learn until he is ready. Developmental readiness to learn, determines the moment when learning can and should take place."
4. **उद्दीपन की आवश्यकता** (Need of Stimulation)—प्राणी में जो आनुवंशिक विशेषताएँ निहित होती हैं उनको विकसित होने के लिए सामाजिक अधिगम एवं उद्दीपन की आवश्यकता पड़ती है। यदि अधिगम के अवसर से वंचित कर दिया जाये तो विकास की गति अवरुद्ध हो जायेगी। इससे आनुवंशिक क्षमताओं को यथोचित रूप में विकसित होने का अवसर नहीं मिल पाता है।

महत्वपूर्ण बिन्दु (Important Points)

मनोवैज्ञानिकों ने शैक्षिक दृष्टि से बाल विकास को तीन भागों में बाँटा है–

1. शैशवावस्था 2. बाल्यावस्था 3. किशोरावस्था

- ❑ समाजीकरण प्रक्रिया के प्रारम्भ होने की अवस्था है **–शैशवावस्था**
- ❑ एक नवजात शिशु का कद (ऊँचाई होती है) **–19.5 इंच**
- ❑ एक नवजात शिशु का भार होता है **–7 पाउंड**
- ❑ शैशवावस्था को सीखने का आदर्श काल कहा है **–वेलेन्टाइन ने**
- ❑ सबसे तेज शारीरिक विकास होता है **–शैशवावस्था में**
- ❑ विकास की प्रक्रिया होती है **–गर्भावस्था से लेकर जीवन पर्यन्त तक**
- ❑ शैशवावस्था में वृद्धि **–तीव्र होती है**
- ❑ जन्म से किशोरावस्था तक की गतिविधियों को **–बाल मनोविज्ञान कहते हैं**
- ❑ शैशवावस्था में चार संवेग होते हैं **–भय, क्रोध, प्रेम, पीड़ा**
- ❑ शैशवावस्था द्वारा जीवन का पूरा क्रम निश्चित होता है, कहा है **–एडलर ने**
- ❑ मनुष्य को जो कुछ बनना होता है। प्रारम्भ के चार पाँच वर्षों में बन जाता है, कथन है **–सिंगमड फ्रायड**
- ❑ शैशवावस्था को बालक का कहा जाता है **–निर्माण काल**
- ❑ नवजात शिशु में हड्डियों की संख्या लगभग होती है **–305**
- ❑ कौन-सी अवस्था में दोहराने की प्रवृत्ति तीव्र होती है **–शैशवावस्था**
- ❑ फ्रायड के अनुसार लड़कियों में कौन-सी ग्रन्थि पायी जाती है **–इलेक्ट्रा ग्रन्थि**
- ❑ जन्म के समय शिशु की औसत लम्बाई होती है **–51.5 सेमी.**
- ❑ नवजात शिशु का भार लगभग होता है **–3 किलो ग्राम**
- ❑ कितने वर्ष में सभी दूध के दाँत निकल आते हैं **–एक वर्ष में**
- ❑ जन्म के समय शिशु की धड़कन रहती है **–अनियमित**
- ❑ हड्डियों में कौन-से तत्व पाये जाते हैं **–कैल्शियम, फॉस्फोरस और खनिज तत्व**
- ❑ कितने वर्ष का बच्चा सार्थक शब्दों का प्रयोग करने लगता है **–3 वर्ष**
- ❑ बालक के विकास की प्रक्रिया एवं विकास की शुरुआत होती है **–जन्म या प्रसव पूर्व से**
- ❑ डाल्टन प्रणाली के जन्मदाता हैं **–मिस हेलेन पार्कहर्स्ट**
- ❑ शैशवावस्था की प्रमुख मनोवैज्ञानिक विशेषता है **–मूल प्रवृत्यात्मक व्यवहार**
- ❑ मूर्त संक्रियात्मक अवस्था का काल होता है **–7 वर्ष से 11 वर्ष**
- ❑ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार छोटे बच्चों को किस आयु में स्कूल भेजना चाहिए **–5 वर्ष**
- ❑ दूध के दाँत होते हैं **–20**
- ❑ जन्म के समय शिशु के मस्तिष्क का भार होता है **–350 ग्राम**
- ❑ ''शैशवावस्था में बच्चे का संवेगात्मक विकास होता है'' **–उत्तेजनापूर्ण**
- ❑ बाल्यावस्था की आयु होती है **–6-12 वर्ष**
- ❑ बाल्यावस्था में बालक होता है **–बाह्य केन्द्रित**
- ❑ क्रिया एवं खेल पर आधारित शिक्षा विधि है **–माण्टेसरी शिक्षण विधि**
- ❑ बाल्यावस्था में खेल की प्रकृति होनी चाहिए **–सामूहिक**
- ❑ बाल्यावस्था में बालक सम्पर्क रखता है **–समवयस्क समलिंगियों से**
- ❑ बाल्यावस्था की प्रमुख मनोवैज्ञानिक विशेषता है **–सामूहिकता की भावना**
- ❑ बाल्यावस्था की प्रमुख विशेषता है **–अधिगम की तीव्रता अपेक्षाकृत स्थिर विकास प्रक्रिया यथार्थवादी दृष्टिकोण**
- ❑ बालिकाओं का भाषा विकास बालकों से आगे रहता है **–बाल्यावस्था में**
- ❑ हड्डियों का विकास होता है **–16 वर्ष तक**
- ❑ 12 वर्ष से 18 वर्ष तक की आयु होती है **–किशोरावस्था**
- ❑ पूर्व-किशोरावस्था होती है **–12 से 16 वर्ष**
- ❑ उत्तर-किशोरावस्था होती है **–17 से 19 वर्ष**
- ❑ किशोरावस्था बड़े दबाव, तनाव तूफान तथा संघर्ष की अवस्था है, कहा है **–स्टेनले हाल ने**
- ❑ अत्यन्त द्रुत एवं तीव्र विकास का काल है **–पूर्व किशोरावस्था**
- ❑ किशोरावस्था में संवेग प्रायः होते हैं **–अधिक उग्र**
- ❑ ''किशोर ही वर्तमान की शक्ति और भावी आशा को प्रस्तुत करता है।'' **–क्रो एवं क्रो**
- ❑ किशोरावस्था को अंग्रेजी में कहते हैं **–Adolescence**
- ❑ संवेगात्मक विकास में किस अवस्था में तीव्र परिवर्तन होता है **–किशोरावस्था**
- ❑ सामाजिक व्यवस्था में परिपक्वता किस काल में आती है **–किशोरावस्था**
- ❑ किशोरावस्था की विशेषताओं को सर्वोत्तम रूप से व्यक्त करने वाला एक शब्द है **–परिवर्तन**
- ❑ किशोरावस्था की प्रमुख मनोवैज्ञानिक विशेषता है **–पूर्ण संवेगात्मक विकास के कारण स्थायित्व एवं समायोजन का अभाव**
- ❑ किशोरावस्था की प्रमुख विशेषता नहीं है **–संचय की प्रवृत्ति**
- ❑ संवेग शब्द का शाब्दिक अर्थ है **–उत्तेजना या भावों में उथल-पुथल**
- ❑ किस अवस्था में आवेगों की तीव्र स्थिति उत्पन्न होती है **–किशोरावस्था**
- ❑ शक्तियों तथा संवेदनशीलता, अवलोकन, प्रत्ययीकरण, स्मृति, ध्यान, कल्पना, चिन्तन, बुद्धि, तर्क आदि में वृद्धि होना है **–मानसिक विकास**
- ❑ शिशु में कब भय एवं क्रोध से सम्बन्धित संवेग का विकास होने लगता है **–एक वर्ष में**
- ❑ गर्भावस्था (Conception Period) के सन्दर्भ में कथन सही नहीं है **–गर्भावस्था में विकास की गति मन्द होती है**

परीक्षोपयोगी महत्वपूर्ण प्रश्न

1. मानव–विकास का प्रारम्भ होता है–
(A) पूर्व–बाल्यावस्था से
(B) उत्तर–बाल्यावस्था से
(C) शैशवावस्था से
(D) गर्भावस्था से

2. शिक्षा में अवरोधन का तात्पर्य है–
(A) बालक का विद्यालय न जाना
(B) बालक द्वारा विद्यालय छोड़ देना
(C) किसी बालक का एक वर्ष से अधिक समय तक एक ही कक्षा में रहना
(D) बालक का विद्यालय में प्रवेश न लेना

3. बच्चे की वृद्धि मुख्यतः सम्बन्धित है–
(A) सामाजिक विकास से
(B) भावात्मक विकास से
(C) नैतिक विकास से
(D) शारीरिक विकास से

4. निम्न में से कौन–सा संज्ञानात्मक क्षेत्र से सम्बन्धित नहीं है?
(A) अनुप्रयोग (B) बोध
(C) ज्ञान (D) अनुमूल्यन

5. विकास की किस अवस्था को कोल तथा ब्रूस ने "संवेगात्मक विकास का अनोखा काल" कहा है?
(A) बाल्यावस्था (B) प्रौढ़ावस्था
(C) किशोरावस्था (D) शैशवावस्था

6. किसी भी नयी भाषा को सीखने के लिए कहाँ से प्रारम्भ किया जाना चाहिए ?
(A) अक्षरों व शब्दों के मध्य साहचर्य से
(B) वाक्यों के निर्माण से
(C) शब्दों के निर्माण से
(D) उपर्युक्त में से कोई नहीं

7. निम्न में से कौन-सा संवेग का तत्त्व नहीं है ?
(A) व्यवहारात्मक (B) दैहिक
(C) संज्ञानात्मक (D) संवेदी

8. संज्ञानात्मक क्षेत्र का सही क्रम है–
(A) ज्ञान–अनुप्रयोग–अवबोध–विश्लेषण–संश्लेषण–मूल्यांकन
(B) मूल्यांकन–अनुप्रयोग–विश्लेषण–संश्लेषण–अवबोध–ज्ञान
(C) मूल्यांकन-संश्लेषण-विश्लेषण-अनुप्रयोग-अवबोध-ज्ञान
(D) ज्ञान-अवबोध-अनुप्रयोग-विश्लेषण-संश्लेषण-मूल्यांकन

9. निम्न में से कौन-सी बाद की बाल्यावस्था के बौद्धिक विकास की विशेषता नहीं है ?
(A) भविष्य की योजना की सूझ-बूझ
(B) विज्ञान की काल्पनिक कथाओं में अधिक रुचि
(C) बढ़ती हुई तार्किक शक्ति
(D) काल्पनिक भयों का अन्त

10. इनमें से कौन मनोवैज्ञानिक 'भाषा विकास' से सम्बद्ध है ?
(A) पावलॉव (B) बिने
(C) चॉमस्की (D) मास्लो

11. गिरोह अवस्था किस आयु-वर्ग एवं विलम्ब-विकास से सम्बन्धित है ?
(A) 16–19 वर्ष एवं नैतिकता
(B) 3–6 वर्ष एवं भाषा
(C) 8–10 वर्ष एवं समाजीकरण
(D) 16–19 वर्ष एवं संज्ञानात्मक

12. संज्ञानात्मक सम्प्राप्ति का न्यूनतम स्तर है–
(A) ज्ञान (B) बोध
(C) अनुप्रयोग (D) विश्लेषण

13. "अधिगम, अनुभव और प्रशिक्षण के परिणाम–स्वरूप व्यवहार में परिवर्तन है।" यह कथन किनके द्वारा दिया गया?
(A) गेट्स व अन्य
(B) मॉर्गन और गिलिलैण्ड
(C) स्किनर
(D) क्रॉनबैक

14. निम्न में से कौन–सा शारीरिक विकास का एक प्रमुख नियम है ?
(A) मानसिक विकास से भिन्नता का नियम
(B) अनियमित विकास का नियम
(C) द्रुतगामी विकास का नियम
(D) कल्पना और संवेगात्मक विकास से सम्बन्ध का नियम

15. बच्चों के सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक हैं–
(A) आर्थिक तत्त्व
(B) सामाजिक परिवेशजन्य तत्त्व
(C) शारीरिक तत्त्व
(D) वंशानुगत तत्त्व

16. निम्न में से कौन–सा विकास का सिद्धान्त नहीं है ?
(A) अनुकूलित प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त
(B) निरन्तर विकास का सिद्धान्त
(C) परस्पर सम्बन्ध का सिद्धान्त
(D) समान प्रतिमान का सिद्धान्त

17. "विकास के परिणामस्वरूप नवीन विशेषताएँ और नवीन योग्यताएँ प्रकट होती हैं।" यह कथन किसने दिया है ?
(A) गेसेल
(B) हरलॉक
(C) मेरेडिथ
(D) डगलस और होलैण्ड

18. 'विद्रोह की भावना' की प्रवृत्ति निम्न में से किस अवस्था से सम्बन्धित है?
(A) बाल्यावस्था (B) शैशवावस्था
(C) पूर्व किशोरावस्था (D) मध्य किशोरावस्था

19. विकास की किस अवस्था में बुद्धि का अधिकतम विकास होता है?
(A) बाल्यावस्था (B) शैशवावस्था
(C) किशोरावस्था (D) प्रौढ़ावस्था

20. शिशु का अधिकांश व्यवहार आधारित होता है।
(A) मूल प्रवृत्ति पर (B) नैतिकता पर
(C) वास्तविकता पर (D) ध्यान

21. मनोविज्ञान का शिक्षा के क्षेत्र में सबसे बड़ा योगदान है।
(A) विषय केन्द्रित शिक्षा
(B) शिक्षक केन्द्रित शिक्षा
(C) क्रिया केन्द्रित शिक्षा
(D) बाल केन्द्रित शिक्षा

22. निम्नलिखित में से कौन–सा वृद्धि और विकास के सिद्धान्तों से सम्बन्धित नहीं है?
(A) निरन्तरता का सिद्धान्त
(B) वर्गीकरण का सिद्धान्त
(C) समन्वय का सिद्धान्त
(D) वैयक्तिकता का सिद्धान्त

23. बाल मनोविज्ञान का क्षेत्र है–
(A) केवल शैशवावस्था की विशेषताओं का अध्ययन
(B) केवल गर्भावस्था की विशेषताओं का अध्ययन
(C) केवल बाल्यावस्था की विशेषताओं का अध्ययन
(D) गर्भावस्था से किशोरावस्था की विशेषताओं का अध्ययन

24. पूर्वाग्रही किशोर/किशोरी अपनी .... के प्रति कठोर होंगे।
(A) समस्या (B) जीवनशैली
(C) सम्प्रत्यय (D) वास्तविकता

25. स्व–केन्द्रित अवस्था होती है बालक के–
(A) जन्म से 2 वर्ष तक
(B) 3 से 6 वर्ष तक
(C) 7 वर्ष से किशोरावस्था तक
(D) किशोरावस्था में

26. माँ-बाप के साये से बाहर निकल अपने साथी बालकों की संगत को पसन्द करना सम्बन्धित है–
(A) किशोरावस्था से
(B) पूर्व किशोरावस्था से
(C) उत्तर बाल्यावस्था से
(D) शैशवावस्था से

27. मानसिक परिपक्वता की ऊँचाइयों को छूने के लिए प्रयत्नरत रहना सम्बन्धित है—
(A) किशोरावस्था से
(B) प्रौढ़ावस्था से
(C) पूर्व बाल्यावस्था से
(D) उत्तर बाल्यावस्था से

28. बुद्धि एवं सृजनात्मकता में किस प्रकार का सहसम्बन्ध पाया गया है ?
(A) धनात्मक (B) ऋणात्मक
(C) शून्य (D) ये सभी

29. शैशवावस्था में बच्चों के क्रिया–कलाप होते हैं।
(A) मूलप्रवृत्यात्मक
(B) संरक्षित
(C) संज्ञानात्मक
(D) संवेगात्मक

30. बच्चों के सामाजिक विकास में ……… का विशेष महत्त्व है।
(A) खेल (B) बाल साहित्य
(C) दिनचर्या (D) संचार माध्यम

31. शारीरिक वृद्धि और विकास को कहते हैं—
(A) तत्परता (B) अभिवृद्धि
(C) गतिशीलता (D) आनुवंशिकता

32. 'चिन्तन संज्ञानात्मक पक्ष में एक मानसिक क्रिया है।' यह कथन दिया गया है—
(A) डिवी द्वारा (B) गिल्फर्ड द्वारा
(C) क्रूज द्वारा (D) रॉस द्वारा

33. बाल मनोविज्ञान के आधार पर कौन–सा कथन सर्वोत्तम है ?
(A) सारे बच्चे एक जैसे होते हैं
(B) कुछ बच्चे एक जैसे होते हैं
(C) कुछ बच्चे विशिष्ट होते हैं
(D) प्रत्येक बच्चा विशिष्ट होता है

34. बाल मनोविज्ञान का केन्द्र बिन्दु है—
(A) अच्छा शिक्षक (B) बालक
(C) शिक्षण प्रक्रिया (D) विद्यालय

35. बाल विकास में—
(A) प्रक्रिया पर बल है
(B) वातावरण और अनुभव की भूमिका पर बल है
(C) गर्भावस्था से किशोरावस्था तक का अध्ययन होता है
(D) उपर्युक्त सभी पर

36. बाल विकास का अध्ययन क्षेत्र है—
(A) बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन
(B) वातावरण का बाल विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन
(C) वैयक्तिक विभिन्नताओं का अध्ययन
(D) उपर्युक्त सभी

37. संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक हैं—
(A) शारीरिक स्वास्थ्य
(B) मानसिक योग्यता
(C) थकान
(D) उपर्युक्त सभी

38. "सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुरूप व्यवहार की योग्यता का अधिगम सामाजिक विकास कहा जाता है।" उक्त कथन है—
(A) हरलॉक का (B) टी.पी. नन का
(C) मैक्डूगल का (D) रॉस का

39. भाषा विकास का सिद्धान्त नहीं है—
(A) अनुबन्धन का सिद्धान्त
(B) अनुकरण का सिद्धान्त
(C) अतिरिक्त शक्ति का सिद्धान्त
(D) परिपक्वता का सिद्धान्त

40. निम्नलिखित में से कौन–सा समूह सृजनात्मकता के तत्वों के सम्बन्ध में सही है?
(A) बारम्बारता, विविधता, मौलिकता, विस्तारण
(B) प्रवाह, व्यवहार्यता, मौलिकता, विस्तारण
(C) प्रवाह, विविधता, मौलिकता, सहकार्यता
(D) प्रवाह, विविधता, मौलिकता, विस्तारण

41. एक चार–पाँच वर्ष के बालक में अपने पिता की अपेक्षा माता के प्रति अत्यधिक प्रेम की भावना विकसित हो जाती है। बालक के व्यवहार में होने वाले इस परिवर्तन को फ्रॉयड द्वारा क्या नाम दिया गया?
(A) ओडिपस कॉम्प्लेक्स
(B) इलेक्ट्रा कॉम्प्लेक्स
(C) पराहम्
(D) नार्सीसिज़्म

42. निम्न मे से कौन–सा कथन सत्य नही है?
(A) विकास एक मात्रात्मक प्रक्रिया है।
(B) शिक्षा एक लक्ष्य उन्मुख प्रक्रिया है।
(C) सीखना व्यवहार परिवर्तन की एक प्रक्रिया है।
(D) वृद्धि एक जैविक प्रक्रिया है।

43. 'बोली जाने वाली भाषा' की सबसे छोटी इकाई है—
(A) ध्वनिग्राम (B) वाक्य विन्यास
(C) अर्थ विज्ञान (D) रूपग्राम

44. सम्भाषण में अर्थ की लघुत्तम इकाई है—
(A) रूपग्राम (B) पद
(C) ध्वनिग्राम (D) शब्द

45. निम्न में से कौन–सी बाल्यावस्था की एक विशेषता नहीं है?
(A) सामूहिकता की प्रबलता
(B) जिज्ञासा की कमी
(C) अभिवृद्धि में अस्थिरता
(D) समूह एवं खेलों में सहभागिता

46. निम्न में से कौन–सा सृजनात्मक प्रक्रिया से सम्बन्धित नहीं है?
(A) उद्भवन (B) अभिप्रेरण
(C) आयोजन (D) प्रबोधन

47. निम्न में से कौन-सा वृद्धि और विकास का प्रथम चरण है?
(A) शारीरिक विकास
(B) सामाजिक विकास
(C) नैतिक विकास
(D) मानसिक विकास

48. शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाला कारक कौन–सा है?
(A) वंशानुक्रम
(B) वातावरण
(C) खेल तथा व्यायाम
(D) ये सभी

49. विकासात्मक कार्य के प्रत्यय के प्रतिपादक थे—
(A) हॉलिंगवर्थ (B) हैविघर्स्ट
(C) जीनपियाजे (D) हल

50. संवेग शब्द का शाब्दिक अर्थ है—
(A) क्रोध और भय
(B) स्नेह तथा प्रेम
(C) उत्तेजना या भावों में उथल–पुथल
(D) उपर्युक्त में से कोई नहीं

51. 'संवेग व्यक्ति की उत्तेजित दशा है' यह कथन निम्नांकित में से किसका है ?
(A) पियाजे (B) वुडवर्थ
(C) वैलेन्टाइन (D) रॉस

52. संवेग का कौन-सा सिद्धान्त इस विचार को मानता है कि संवेगात्मक अनुभव संवेगात्मक व्यवहार पर आधारित है?
(A) जेम्स-लैंग सिद्धान्त
(B) हाइपोथैमिक सिद्धान्त
(C) सक्रियता सिद्धान्त
(D) अभिप्रेरण सिद्धान्त

53. संवेग की उत्पत्ति से होती है।
(A) आदतों
(B) मूल प्रवृत्तियों
(C) शारीरिक विकास
(D) संप्रत्ययों के निर्माण

54 पूर्व अनुभव के आधार पर संवेदना को अर्थ प्रदान करना कहलाता है–
(A) संवेदना (B) प्रत्यक्ष ज्ञान
(C) अभिप्रेरणा (D) कल्पना

55. शैशवावस्था के लिए उत्तम शिक्षण विधि है—
(A) मॉण्टेसरी विधि
(B) खेल विधि
(C) किण्डरगार्टन विधि
(D) उपर्युक्त सभी

व्याख्यात्मक हल

1. (D) मानव विकास का प्रारम्भ गर्भावस्था से प्रारम्भ होता है। मानव जीवन के विकास का अध्ययन विकासात्मक मनोविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। विकासात्मक मनोविज्ञान मानव के पूरे जीवन भर होने वाले वर्धन, विकास एवं बदलावों का अध्ययन करता है। इसमें गर्भावस्था से लेकर वयस्कावस्था के अंतिम स्तर तक के विकास का अध्ययन सम्मिलित होता है। सारणी में इसे आयु के आधार पर क्रम से प्रदर्शित किया गया है।

विकास की अवस्था	आयु विवरण
1. गर्भावस्था (prenatal stage)	गर्भाधान से लेकर जन्म तक
2. शैशवावस्था (infancy stage)	जन्म से तीन वर्ष की आयु तक
3. बाल्यावस्था (childhood stage)	चौथे वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक
4. किशोरावस्था (adolescence stage)	13 वर्ष से 17 वर्ष तक
5. वयस्कावस्था (adulthood stage)	18 वर्ष से लेकर मृत्यु तक

2. (C) शिक्षा में अवरोधन से तात्पर्य किसी बालक का एक वर्ष से अधिक समय तक एक कक्षा में रहना होता है। इसका मुख्य कारण शिक्षा के क्षेत्र में छात्र की नियमित रूप से प्रगति न हो पाना होता है। अर्थात् निर्धारित अवधि में किसी कक्षा में परीक्षा पास करके अगली कक्षा तक न पहुँच पाना शिक्षा का अवरोधन कहलाता है।

3. (D) बच्चे में वृद्धि मुख्यतः शारीरिक विकास से संबंधित है।

व्यक्ति के स्वाभाविक विकास को वृद्धि कहते हैं। गर्भाशय में भ्रूण बनने के पश्चात् जन्म होते समय तक उसमें जो प्रगतिशील परिवर्तन होते हैं वह वृद्धि है। इसके अतिरिक्त जन्मोपरान्त से प्रौढ़ावस्था तक व्यक्ति में स्वाभाविक रूप से होने वाले परिवर्तन, जो अधिगम एवं प्रशिक्षण आदि से प्रभावित नहीं है, और ऊर्ध्ववर्ती हैं, यह भी वृद्धि है। वृद्धि की सीमा पूर्ण होने के पश्चात् लम्बाई में विकास होने की सम्भावना नगण्य होगी। वृद्धि एक जैविक प्रक्रिया है जो सभी जीवों में पायी जाती है। अभिवृद्धि स्वतः होती है। व्यक्ति में वृद्धि का माप किया जा सकता है और मापन में वही तत्व अथवा विशेषताएँ आती हैं जो जन्म के समय विद्यमान होंगी। अधिगम पर वृद्धि का प्रभाव देखा जा सकता है। जब तक बालक की माँसपेशियों की पर्याप्त वृद्धि नहीं हो जाती तब तक वह चलना अथवा लिखना नहीं सीख सकता, किन्तु यदि वृद्धि पर अधिगम अथवा अभ्यास का प्रभाव डाला जाएगा तो उसे हम विकास कहेंगे न कि वृद्धि, क्योंकि अभिवृद्धि स्वतः घटित होती है। व्यक्ति की वृद्धि में वातावरण का प्रभाव पड़ सकता है।

4. (D) अनुमूल्यन संज्ञानात्मक क्षेत्र से संबंधित नहीं है।

5. (A) बाल्यावस्था को कोल तथा ब्रूस ने संवेगात्मक विकास का अनोखा काल कहा है। इस काल में बालकों की ज्ञानेन्द्रियाँ तीव्रता से विकसित होती हैं। मानसिक विकास की दृष्टि से भाषा का विकास व कौशल का विकास होता है। मनोवैज्ञानिकों ने पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को 'ज्ञान का प्रत्यक्ष द्वार' (Gateway of knowlege) कहा है। अतः मानसिक विकास की दृष्टि से इस काल के भाषा व कौशलों का विकास भी होता है। साथ ही बालक अपने संवेगों के प्रति प्रतिक्रिया को व्यक्त भी करते हैं।

6. (A) नयी भाषा को सीखने के लिए अक्षरों तथा शब्दों का ज्ञान आवश्यक है। इसलिए शिशु अवस्था में शब्दों का ज्ञान कराया जाता है। उसके पश्चात् अक्षरों का ज्ञान। अतः अक्षरों तथा शब्दों के मध्य साहचर्य से नयी भाषा सीखी जाती है।

7. (D) व्यवहारात्क, दैहिक व संज्ञानात्मक तीनों संवेग के तत्व हैं, जबकि संवेदी–संवेग का तत्व नहीं है। क्योंकि संवेद उत्पन होने पर दो स्तर पर परिवर्तन होता है–

(1) शारीरिक

(2) मानसिक ।

8. (D) संज्ञानात्मक क्षेत्र का सही क्रम- ज्ञान–अवबोध–अनुप्रयोग–विश्लेषण–संश्लेषण–मूल्यांकन होता है।

9. (A) भविष्य की योजना की सूझ-बूझ बाल्यावस्था की बौद्धिक विशेषता नहीं है। क्योंकि भविष्य की योजनाओं के लिए किशोरावस्था चिंतित रहती है। जिसके कारण बालक तनाव में रहता है न कि वह अपने भविष्य की योजनाओं के प्रति सूझ-बूझ प्रदर्शित करता है।

10. (C) चॉमस्की एक भाषा विज्ञानी थे। उन्होंने अपने इस सिद्धान्त में भाषा विकास के धनात्मक पहलू पर अधिक बल दिया। भाषा विकास का यह पहलू बच्चे द्वारा वाक्य विन्यास के नियमों को सीखने की क्षमता पर आधारित है।

11. (C) गिरोह अवस्था 8-10 वर्ष एवं समाजीकरण से सम्बन्धित है। 8-10 वर्ष की आयु के बालक अपने समूह का सक्रिय सदस्य बन जाता है जो किशोरावस्था में चरम स्तर पर पहुँच जाता है। अतः गिरोह अवस्था समाजीकरण से सम्बन्धित होती है।

12. (A) ब्लूम द्वारा संज्ञानात्मक सम्प्राप्ति को छह भागों में विभाजित किया गया है; यथा- ज्ञान, अवबोध, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन के रूप में विभाजित किया है। इनमें से ज्ञान संज्ञानात्मक में सबसे नीचे स्तर पर है।

13. (A) अधिगम का अर्थ होता है, सीखना; यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो जीवन पर्यन्त चलती रहती है। इसके माध्यम से हम ज्ञान अर्जित करके अपने व्यवहार में परिवर्तन लाते हैं। गेट्स एवं अन्य मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम को परिभाषित करते हुए कहा है कि "अधिगम अनुभव एवं प्रशिक्षण के व्यवहार में परिवर्तन है।"

14. (C) शारीरिक विकास एक सतत विकास है, जो कभी मन्द तो कभी द्रुत (तेज) गति से होता है। द्रुतगामी विकास शारीरिक विकास का प्रमुख नियम है।

15. (B) बच्चों के सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाला कारक मुख्य रूप से सामाजिक परिवेशजन्य तत्व होता है। परिवार के पश्चात समाज ही वह संस्थान हैं, जहाँ बालकों का सर्वांगीण (सामाजिक सांस्कृतिक, मानसिक, नैतिक) विकास होता है।

16. (A) अनुकूलित प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त विकास से सम्बन्धित नहीं है, जबकि निरन्तर विकास, परस्पर सम्बन्ध, समान प्रतिमान, एकीकरण, विकास की दिशा से सम्बन्धित सिद्धान्त बाल विकास से सम्बन्धित हैं। विकास माँ के गर्भ से लेकर मृत्युपर्यन्त तक निरंतर होता रहता है। अनुकूलित प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त अधिगम से सम्बन्धित सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार ''सीखना एक अनुकूलित अनुक्रिया है''।

17. (A) प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक गेसेल ने विकास के सन्दर्भ में कहा है कि "विकास के परिणाम–स्वरूप नवीन विशेषताएँ एवं नवीन योग्यताएँ प्रकट होती हैं।

18. (D) प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जीन पियाजे के अनुसार, विद्रोह की भावना मध्य किशोरावस्था में होती है। जोकि इनके अनुसार 13 से 15 वर्ष मानी गई है। इस अवस्था में किशोर में शारीरिक और मानसिक स्वतंत्रता की भावना प्रबल होती है। यदि उस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाया जाता है तो उसमें विद्रोह की भावना फूट पड़ती है।

19. (C) बुद्धि का अधिकतम विकास बाल्यावस्था में होता है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था में बालकों में मानसिक विकास काफी तेजी से होता है और परवर्ती किशोरावस्था आते–आते अर्थात् 19-20 साल की आयु तक काफी धीमा हो जाता है।

20. (A) शैशवस्था बालक का निर्माण काल माना जाता है। इसे सीखने का अनोखा काल भी कहते हैं। इस अवस्था में शिशु का व्यवहार मूल प्रवृत्तियों पर आधारित होता है; जैसे–रोना, हँसना, स्वप्रेम की भावना आदि।

21. (D) मनोविज्ञान का शिक्षा के क्षेत्र में सबसे बड़ा योगदान है। बाल केन्द्रित शिक्षा के विकास का मनोविज्ञान के द्वारा ही शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। जिसके परिणामस्वरूप बालक के व्यवहार को नियन्त्रित करके सकारात्मक दिशा प्रदान की जाती है।

22. (B) वृद्धि एवं विकास सतत् प्रक्रिया है। जो बालक को शिशु से, आत्मनिर्भर, प्रौढ़ बनाती है। विकास के सिद्धान्त निम्नवत् हैं जिससे विकास की प्रक्रिया नियन्त्रित होती है–

(1) निरन्तरता का सिद्धान्त

(2) एकीकरण (समन्वय) का सिद्धान्त

(3) वैयक्तिकता का सिद्धान्त

(4) विकासक्रम का सिद्धान्त

(5) वंशानुक्रम व वातावरण का अन्तः–क्रिया का सिद्धान्त

वर्गीकरण का सिद्धान्त विकास का सिद्धान्त नहीं है।

23. (D) गर्भावस्था से लेकर किशोरावस्था तक की सभी अवस्थाओं की विशेषताओं का अध्ययन करना बाल मनोविज्ञान के क्षेत्र के अंतर्गत आता है।

24. (A) पूर्वाग्रही किशोर/किशोरी अपनी समस्याओं के प्रति कठोर होते हैं। किशोर-किशोरियों की यह समस्याएँ मुख्यतः शिक्षा, नैतिकता, भावनात्मक तथा व्यवसाय से सम्बन्धित होती हैं। अतः इनका निदान किसी प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा किया जाना आवश्यक होता है। साथ ही बालक-बालिकाओं को समय–समय पर निर्देशन व परामर्श प्रदान करना भी अति आवश्यक हो जाता है। पूर्वाग्रह से तात्पर्य है किसी के सम्बन्ध में पहले से ही निश्चित मत (Opinion)।

25. (B) 3 से 6 वर्ष तक की अवस्था को पूर्व बाल्यावस्था कहा जाता है। इस अवस्था में बालक अपने सुखों की प्राप्ति हेतु तत्पर रहता है इसलिए ही इस अवस्था को स्वकेन्द्रित अवस्था भी कहा जाता है।

26. (B) 9 से 12 तक की अवस्था पूर्व किशोरावस्था होती है। पूर्व किशोरावस्था में बालक माता–पिता से हटकर एक सांवेगिक स्वतन्त्रता कायम करना चाहता है। इसी कारण इस अवस्था में बालक अपने साथी बालकों की संगत को अन्य की तुलना में अधिक पसन्द करने लगता है।

27. (A) किशोरावस्था वह समय है जिसमें बालक बाल्यावस्था से परिपक्वता की ओर संक्रमण करता है। जिसके परिणाम–स्वरूप वह इस अवस्था में मानसिक परिपक्वता की ऊँचाइयों को छूने हेतु प्रयत्नरत रहता है।

28. (A) बुद्धि एवं सृजनात्मकता दोनों दो अलग–अलग सम्प्रत्यय हैं, फिर भी दोनों में धनात्मक सहसम्बन्ध पाया जाता है अर्थात् बुद्धि के बढ़ने पर सृजनात्मकता बढ़ती है तथा बुद्धि के घटने पर सृजनात्मकता भी घटती है।

29. (A) शैशवावस्था में शिशु के अधिकांश व्यवहार का आधार उसकी मूल प्रवृत्तियाँ होती हैं। जैसे यदि उसको किसी बात पर क्रोध आ जाता है, तो वह उसको वाणी या क्रिया द्वारा व्यक्त करता है।

30. (A) खेल एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से बालक की मूल प्रवृत्तियाँ अपने आपको प्रकाश में लाने की चेष्टा करती हैं तथा उसके सामाजिक विकास की दिशा को एक मार्ग मिलता है।

31. (B) शारीरिक वृद्धि तथा विकास को 'अभिवृद्धि' कहते हैं। शारीरिक अभिवृद्धि का अर्थ शरीर के विभिन्न अंगों एवं उनकी कार्यक्षमता का क्रमिक विकास है। गर्भाधान के समय से मृत्यु पर्यन्त व्यक्ति सतत् परिवर्तनशीलता पर आधारित रहता है। वह कभी भी स्थिर नहीं रहता है। शारीरिक अभिवृद्धि से व्यवहार तथा व्यवहार से शारीरिक अभिवृद्धि प्रभावित होती है।

32. (D) 'चिन्तन संज्ञानात्मक पक्ष में एक मानसिक क्रिया है।' यह कथन रॉस द्वारा दिया गया है।

33. (D) 'बाल मनोविज्ञान', मनोविज्ञान की वह शाखा है जिसमें जन्म से परिपक्वावस्था तक विकसित हो रहे बालक का अध्ययन इस तथ्य पर जोर देकर किया जाता है कि प्रत्येक बच्चा विशिष्ट होता है। यह विशिष्टता प्रायः जन्मजात व आनुवंशिकता पर आधारित होती है।

34. (B) बाल मनोविज्ञान का मुख्य केन्द्र बालक होता है, क्योंकि इसके अन्तर्गत बालक में हो रहे शारीरिक परिवर्तन एवं व्यावहारिक परिवर्तन का अध्ययन एवं परीक्षण किया जाता है तथा उसके अनुसार पाठ्यक्रम का निर्धारण किया जाता है।

35. (D) बाल विकास मनोविज्ञान की एक महत्त्व–पूर्ण, उपयोगी तथा समाज एवं राष्ट्र के लिए कल्याणकारी शाखा है जिसमें गर्भावस्था से किशोरावस्था तक के अध्ययन हेतु वातावरण एवं अनुभव की भूमिका एवं प्रक्रिया पर बल दिया जाता है।

36. (D) मनुष्य जन्म से लेकर किशोरावस्था के अंत तक उनमें होने वाले जैविक व मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों को 'बाल विकास' कहते हैं तथा इसके अन्तर्गत बालक के शारीरिक, मानसिक, व्यावहारिक परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है तथा उन पर पड़ने वाले प्रभावों के साथ–साथ बालक का वैयक्तिक भिन्नता का भी अध्ययन करते हैं।

37. (D) संवेगात्मक विकास से हमारा तात्पर्य इस बात से है कि बालकों में विभिन्न तरह के संवेग का विकास कैसे होता है तथा किन कारणों से उनका विकास प्रभावित होता है? शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक योग्यता तथा थकान संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं।

38. (A) हारलॉक एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने समाज का प्रभाव बालक के विकास एवं अधिगम पर किस प्रकार पड़ता है। हरलॉक के अनुसार, "सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुरूप व्यवहार की योग्यता का अधिगम सामाजिक विकास कहा जाता है।

39. (C) भाषा विकास से हमारा तात्पर्य एक ऐसी क्षमता से है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने भावों, विचारों तथा इच्छाओं को दूसरे तक पहुँचाता है तथा दूसरों की इच्छाओं और भावों को ग्रहण करता है अनुबन्धन अनुकरण तथा परिपक्वता इसके प्रमुख सिद्धान्त हैं।

40. (D) सृजनात्मकता वह योग्यता होती है जो व्यक्ति को किसी समस्या का विहतापूर्ण समाधान खोजने के लिए नवीन ढंग से सोचने के लिए समर्थ बनाती है। सृजनात्मकता के तत्व हैं–

1. प्रवाह
2. विविधता
3. मौलिकता
4. विस्तारण

41. (A) एक चार–पाँच वर्ष का बालक अपने पिता की अपेक्षा माता से अत्यधिक प्रेम की भावना रखता है। बालक के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को फ्रॉयड ने ओडिपस कॉम्प्लेक्स का नाम दिया। मनोविश्लेषण के जन्मदाता डॉक्टर सिगमंड फ्रायड ने पुत्र की माता के प्रति कामवासना (Sex) की ग्रन्थि को ईदिपस ग्रन्थि (Oedipus Complex) की संज्ञा दी। मनुष्य की प्रथम कामवासना का लक्ष्य माता तथा प्रथम हिंसा व घृणा के भाव का लक्ष्य पिता होता है। इसलिए यह कामवासना की ग्रन्थि ईदिपस ग्रन्थि के नाम से जानी जाती है।

42. (A) विकास एक मात्रात्मक प्रक्रिया है यह कथन असत्य है, क्योंकि शरीर के गुणात्मक परिवर्तन को विकास कहा जाता है।

43. (A) ' बोली जाने वाली भाषा' की सबसे छोटी इकाई ध्वनिग्राम है। इसे स्वनिम भी कहते हैं।

44. (A) सम्भाषण में अर्थ की लघुतम इकाई रूपग्राम है।

45. (B) जिज्ञासा की कमी बाल्यावस्था की एक विशेषता नहीं है–बाल्यावस्था की विशेषतायें हैं–

1. सामूहिक खेलों में रुचि
2. जिज्ञासा की प्रबलता
3. रचनात्मक कार्यों में आनन्द
4. मानसिक योग्यताओं में वृद्धि
5. आत्मनिर्भरता की भावना
6. अभिवृद्धि में अस्थिरता।

46. (B) अभिप्रेरणा सृजनात्मक प्रक्रिया से सम्बन्धित नहीं है। जबकि 'आयोजन, प्रबोधन एवं उद्भवन, सृजनात्मक प्रक्रिया से सम्बन्धित हैं।

47. (A) वृद्धि एवं विकास के निम्न चरण हैं–

1. शारीरिक विकास
2. मानसिक विकास
3. संवेगात्मक विकास
4. नैतिक विकास
5. सामाजिक विकास।

48. (D) शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक के अन्तर्गत वंशानुक्रम, वातावरण तथा खेल एवं व्यायाम, भोजन, परिवार की स्थिति, दिनचर्या, विश्राम तथा निद्रा आदि आते हैं।

49. (B) विकासात्मक कार्य के प्रत्यय के प्रतिपादक राबर्ट हैविघर्स्ट थे, जिन्होंने 1950 में इस प्रत्यय की खोज की। हैविघर्स्ट के अनुसार विकासात्मक कार्य का उदय मनुष्य जीवन में तभी होता है, जब उसका सामाजिक क्षेत्र विस्तृत होता है।

50. (C) 'संवेग' प्राणी की एक जटिल अवस्था है, जिसमें शारीरिक परिवर्तन प्रबल भावना के कारण उत्तेजित दशा तथा एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने की प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होते हैं। वुडवर्थ के अनुसार, संवेग व्यक्ति की उत्तेजित दशा है।

51. (B) संवेगावस्था में व्यक्ति असामान्य व्यवहार करने लगता है। वुडवर्थ के अनुसार, 'संवेग' व्यक्ति की उत्तेजित दशा है।

52. (A) जेम्स लैंग सिद्धान्त "संवेगात्मक अनुभव संवेगात्मक व्यवहार पर आधारित है। जेम्स लैंग ने अपने एक लेख में एक तर्क दिया कि ज्यादातर भावात्मक अनुभव शारीरिक बदलावों के कारण होते हैं।

53. (B) **मैक्डूगल** के अनुसार ''व्यक्ति अनेक मूल प्रवृत्तियाँ लेकर संसार में आता है। इन मूल प्रवृत्तियोंड का सम्बन्ध विभिन्न प्रकार के संवेगों से होता है।'' अर्थात् मूल प्रवृत्तियों से ही संवेगों की उत्पत्ति होती है। मैक्डूगल ने 14 प्रकार की मूल प्रवृत्तियों के बारे में बताया है, जिससे संवेगों की उत्पत्ति होती है। जैसे–

मूल प्रवृत्तियाँ	**संवेग**
भागना	भय
युयुत्सा, युद्धप्रियता	क्रोध
शिशु रक्षा	वात्सल्य
	आदि।

54. (B) पूर्व अनुभव के आधार पर संवेदना को अर्थ प्रदान करना प्रत्यक्ष ज्ञान कहलाता है।

55. (D) पाँच वर्ष तक की अवस्था शरीर और मस्तिष्क के लिए बड़ी ग्रहणशील होती है। इस अवस्था में मॉण्टेसरी विधि, खेल विधि तथा किण्डरगार्टन विधि बच्चों के विकास हेतु उपयुक्त शिक्षण विधियाँ हैं।